UNIVERSAL LIBRARY
OU_186730
UNIVERSAL LIBRARY

OUP—24—4-4-69—5,000

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No. H294.554 H98P Accession No. P. G. H2938

Author हुजूर महाराज

Title प्रेमसमाचार 1959

This book should be returned on or before the date last marked below.

राधास्वामी दयाल की दया

राधास्वामी सहाय

प्रेम समाचार

(परम गुरु हुज़ूर सरकार साहब)

— प्रकाशक —

राधास्वामी सतसंग सभा, दयालबाग़ (आगरा)

Post Graduate Library
College of Arts & Commerce, O. U.

राधास्वामी संवत् १४१

सन् १९५९ ई०

(*All Rights Reserved*)

First Edition	(1913)	As a magazine
Second Edition	(1923)	1000
Third Edition	(1937)	1000
Fourth Edition	(1959)	1000

PRINTED BY BABU RAM JADOUN, M.A.
AT THE DAYALBAGH PRESS, DAYALBAGH, AGRA

सूचीपत्र

विषय	पृष्ठ
१—निवेदन	(अ)
२—प्रार्थना	१
३—प्रेम समाचर	११
४—परम गुरु	२०
५—मुतफ़र्रिक़ बचन—	३७-४८
(१) सच्ची लगन और रगड़ का फल ...	३७
(२) दुनिया में मांसाहार के बिल्कुल तर्क करने का अचरजी जोश	३६
(३) परमार्थ में बाल-स्वभाव की जल्दी और घबराहट की अनजानता	४४
(४) प्रार्थना का असर	४६
६—बसन्त, होली और भंडारा स्वामीजी महाराज	४६-५४
(१) बसन्त	४६
(२) होली	५०
(३) भंडारा सालाना परम पुरुष पूरन धनी स्वामीजी महाराज	५४
७—सवाल व जवाब	५५
८—शब्द—	
(१) खेलत फाग अपार पियारे (आज) (होली) ...	५६
(२) ऐसी चतुरता बलिहार	६०
(३) जिनको प्रिय न परम गुरु प्यारे	६०
(४) परम गुरु परम पितु	६१
(५) दर्शन कैसे पाऊँ घट में	६२
(६) दर्शन दीजै दीनदयाला	६४
(७) धन धन धन प्रीतम बलिहारी	६५

Post Graduate Library
College of Arts & Commerce, O. U.

निवेदन

राधास्वामी मत के चौथे आचार्य परम गुरु हुज़ूर सरकार साहब के समय में एक मासिक पत्र प्रकाशित करने का प्रबन्ध किया गया और वार्षिक चन्दा उस पत्र का चार रुपया रक्खा गया। यह पत्र 'प्रेम समाचार' नाम से जनवरी सन् १९१३ ई० से लेकर जून सन् १९१३ ई० तक के लिये एक साथ ही एक प्रति के रूप में प्रकाशित हुआ परन्तु हुज़ूर सरकार साहब की बीमारी के कारण उसकी दूसरी प्रति प्रकाशित नहीं की जा सकी।

प्रेम समाचार में जो लेख उस समय प्रकाशित हुए थे वे सब हुज़ूर सरकार साहब की पवित्र लेखनी से लिखे गये थे और कुछ शब्द भी उन्हीं दयाल के रचे हुए उसमें प्रकाशित हुए।

इन लेखों में "परम गुरु" शीर्षक लेख विशेष महत्व रखता है और "परम गुरु" के संबंध में राधास्वामी सतसंग के विचारों को जिस स्पष्ट रूप से इस लेख में वर्णन किया गया है वैसा पहले कभी नहीं हुआ था। हुज़ूर सरकार साहब के रचे हुए शब्द भी अत्यन्त रसीले और मनोहर हैं और पढ़ने में विशेष आनन्द देते हैं।

हुज़ूर साहबजी महाराज के समय में जब 'प्रेम समाचार' को पुस्तक रूप में प्रकाशित किया गया तो उस समय हुज़ूर सरकार साहब के ३ और शब्द उसमें शामिल कर दिये गये और फिर हुज़ूर साहबजी महाराज के गुप्त होने पर सन् १९३७ ई० में 'प्रेम समाचार' फिर प्रकाशित किया गया। अब फिर नया संस्करण प्रकाशित किया जा रहा है।

दयालबाग़
२३ जनवरी सन् १९५९ ई०

—प्रकाशक—

राधास्वामी दयाल की दया

राधास्वामी सहाय

प्रेमसमाचार

राधास्वामी रच्छक जीव के जीव न जाने भेद ।
गुरु चरित्र जाने नहीं रहे कर्म के खेद ॥
खेद मिटे गुरु दर्श से और न कोई उपाय ।
सो दर्शन जल्दी मिलें बहुत कहा मैं गाय ॥
राधास्वामी से सतगुरु नहीं, राधास्वामी सा निज नाम ।
सुरत शब्द सम योग नहिं, पाया भेद अनाम ॥
राधास्वामी गुरु समरत्थ, तुम बिन और न दूसरा ।
अब करो दया परतच्छ, तुम दर एती बिलँब क्यों ॥

प्रार्थना।

हे संतन-सिरताज कृपाला हे गुरु दीनदयाला ।
हे समरथ देवन के देवा हे सतगुरु प्रतिपाला ।१।
हे दुखभंजन आनँदकन्दन परम संत अबिनासी ।
हे गुरु दाता जग पितु माता सदा अलेख निवासी ।२।

परम पुरुष पूरन पद दानी भक्तन के हितकारी ।
दयासिन्धु जग जीव उबारन तीन लोक के पारी ।३।
पिंड अंड ब्रह्मंड के पारा सार सिंध के बासी ।
कर्ता के कर्ता के कर्ता आप मूल सुख रासी ।४।
ऐसे प्रीतम प्रान पियारे पूरन धनी अनामी ।
तिनके चरन कमल सिर धरके गाऊँ राधास्वामी ।५।
अगम गीत यह गावन चाहूँ तुम्हरी मौज निहारा ।
मौज होय तो सतगुरु स्वामी करूँ सुपंथ बिचारा ।६।
पंथ अगाध अगम अति झीना मेरी बुद्धि मलीना ।
ज्ञान बिहीना मन आधीना भक्ती रीति न चीना ।७।
मन रँग राता बिष रस माता नित अन्तर अकुलाता ।
तुम बिन दाता सूझ न आता सुध बुध नेक न पाता ।८।
मेहर होय तो कुछ बन आवे मर्म पंथ टुक गावे ।
मन ठहरावे भाग जगावे दर्शन अन्तर पावे ।९।
आदि अनादी भेद सुनावे घर की राह बतावे ।
प्रीतम राधास्वामी चरनन प्रेम प्रतीति बढ़ावे ।१०।

सन्देश

सुनो चित्त दे प्रेम प्रीति से मारग का निज भेदा ।
जा सुनते मन निश्चय लाते मिटे सकल भ्रम खेदा ।११।
मन बुधि छलबल और चतुराई काम क्रोध मद लोभा ।
बाद बिबाद बाचिक और विद्या तिनकी नहिं यहाँ शोभा ।१२।
घट के बैरी सदा बिरोधी झूठ सत्य कर देहीं ।
नाना बिधि के बिष तरंग से मान में मन हर लेहीं ।१३।

या जुक्ती से निर्मल मारग कभी न होय बिचारा।
जिन जिन ने इन आसा धारी तिन निरास थक हारा।१४।
यह तो हैं सब मन की धारें मन है काल का अंसी।
जा ने काल की आसा धारी वा मुख अटकी बंसी।१५।
अटक छुड़ावनहार जगत में कोई नज़र न आवे।
खोज थके पच मरे सभी जन दयासिन्धु को पावे।१६।
अस बिचार यह हित की बातें सुन लीजे धरि ध्याना।
भवजल लहर ज़हर सागर में सतगुरु संग ठिकाना।१७।
सतगुरु संत परम पद बासी आदि अनादी रक्षक।
दया धार वे सब को पोषें जीत काल जिवभक्षक।१८।
बिन स्वारथ निज सरन में लावें गावें भेद अपारा।
मरम गाय मारग दरसाईं करें जीव निस्तारा।१९।
ऐसे समरथ जब जग आवें धर सतगुरु औतारा।
तबही प्रगटे जोति मर्म की होय अनन्त उजारा।२०।
सो यह औसर चित ललचावन अति सुन्दर मनभावन।
आनन्द लावन तिमिर नसावन प्रगट्यो या संसारन।२१।
हे प्रेमी परमारथ खोजी उदासीनचित त्यागी।
हे सब जीव मुक्ति के गाहक सुरतवन्त अनुरागी।२२।
सबको सुन्दर ख़बर जनाऊँ कहत चित्त अति उमँगे।
अन्तर शीतल बाहर निर्मल घट अनन्त रँग झलके।२३।
अचरज भाग जगा जगजीवन बरनत बने न वारा।
को कहि सके मर्म या गति की जाका वार न पारा।२४।
खुली खान सत परमारथ अब मिल गये पुरुष अनामी।
प्रगटे परम संत निज दाता सतगुरु राधास्वामी।२५।

मनमोहन दिलदार सरलचित सुन्दर शीतल गाता ।
दर्शन जाके करत हरष मन मिटत सहज उतपाता ।२६।
सत्त नूर वा रूप में झलके सेत सेत सब दीसे ।
अचरज शोभा तेज अनूपा प्रिय लागे अति जी से ।२७।
सत्त प्रेम की सीतल धारा अंग अंग से जारी ।
देखत उमँगत पीवत मातत सुन्दर सूरत प्यारी ।२८।
दयासिन्धु से उठे मौज जब बचन रूप होय जारी ।
वाके परमानन्द परम रस भीजत तन मन सारी ।२९।
जगे भाग अचरज जिन जिनके मिले आय अस संगा ।
सतसंगत प्रेमा बिलास में किया संसय सब भंगा ।३०।
जीवनिबलऔर कालकरमबस देख दया जब आई ।
निजमालिकदयालराधास्वामी सतगुरु रूप बनाई ।३१।
रूप धरा अति परम सुहावन दया मेहर के कारन ।
प्रेम लगाय अभागी जीवन महा जाल कटवावन ।३२।
खोली अन्तर दृष्टी जिनकी छिन में तिमिर नसाया ।
निज चरनन में दीन लीन कर काल को दूर भगाया ।३३।
और अभागी अतिमलीनजिव हम से पापी कामी ।
तिन की नीच बुद्धि के कारन खोल भेद दिया स्वामी ।३४।
अति मलीन पत्थरहिरदय भी बचन सुना उमँगाया ।
निज चरनन की सरन दात दे राधास्वामीभागजगाया ।३५।
पर भवसागर लहर क़हर अति गहिर गँभीर अपारा ।
काम क्रोध मद लोभ मोह की अगम अपारा धारा ।३६।
सुन्दर चेतन निर्मल बुद्धी सत बिचार सत भाऊ ।
छिपे अकाश गर्द माया में सूझत कोई न दाऊ ।३७।

सत्त सूर के उदय हुए भी केते ही रहे अंधे ।
नयनन हीन फँसे जिव सारे भर्म में अंधे धुंधे ।३८।
अस अभाग जीवन का देखत अती तरस मन आवत ।
जिय अकुलावत हियघबरावत कोऊ उपाव बन आवत ।३९।
सो उपाव कोइ और न सूझत एक चरन की आसा ।
हो उन दासा कर बिस्वासा मेटूँ जम की त्रासा ।४०।
पूरन भेद दिया गुरु सतगुरु अजरज अकह अपारा ।
सत परमारथ सार अंस संतन मत सार का सारा ।४१।
प्रथमे गति मति जग दुखदाई पूरन दिया लखाई ।
दूजे पार पुरुष की महिमा अचरज बरन सुनाई ।४२।
अस मन को इत ते कुछ हर के उत की ललक लगाई ।
तीजे भेद अगम मारग का खोल खोल जतलाई ।४३।
जब ही आँख खुली मन मूरख फ़िकिर देश की आई ।
जगत भाव भय मन से त्यागी भोगन से अकुलाई ।४४।
तब ही परम दयाल गोसाईं दीन दान निज नामा ।
देश ठिकाना रूप निशाना महा काल पहिचाना ।४५।
शब्द अगम की ख़बर जनाई सरन अडोल गहाई ।
मन बैरी की घात बचाकर सूरत पार कराई ।४६।
पिंड जाल को आप काट गुरु तिल से राह चलाई ।
सहसकमल कर पार गगन में निज दर्शन दिखलाई ।४७।
दर्शन करत सुरत मगनानी सुख कस बरना जाई ।
सुन्न दिखाय अगाध सिंध को छिन में पार कराई ।४८।
सत्त नूर सत सिंध सार पद लखि सूरत मुसकाई ।
अलख अगम दर्शन कर प्यारी राधास्वामी चरन समाई ।४९।

अस अपार गति सहजहि दाता निज प्रेमी को दीना।
महाजाल को हाल काट कर प्रीतम निज कर लीना।५०।

करनी

नहिं संदेह मिले यह पदवी सब सरनागत जन को।
प्रेमी प्यारे दास भक्त सब जो जो सोधें मन को।५१।
पर है करमभूमि यह मण्डल करनी करे सो पावे।
बिन करनी नहिं प्रगट होय फल निज घर कोइ न जावे।५२।
राधास्वामी दयाल परम गुरु यों निज वाक्य पुकारा।
"करनी करो मार मन डारो इन्द्री रोक दुआरा"।५३।
साहब संत कबीर सतगुरू करनी मुख्य बताई।
बिष से अम्मृत करन हेतु को करनी ही ठहराई।५४।
नानक पलटू जगजीवन इत्यादि साध अरु संता।
करनी रीति सिखाय भक्त की मेटी जग भय चिन्ता।५५।

निर्णय

सुमिरन करनी ध्यान है करनी शब्द श्रवन निज करनी।
सतसँग करनी सेवा करनी भक्ति भाव सब करनी।५६।
"मेहर दया करनी करवाई" ऐसे दयाल सुनाया।
"करनी कर बहु मेहर बढ़ाई" पर यों भी कह गाया।५७।
अस करनी जो रतखान है बने न बिन अनुरागा।
बिन परतीत प्रीति जुक्ती के यह मन कभी न जागा।५८।
अस अनुराग प्रतीति प्रीति सब बिन सतसंग न आवे।
सतसंगत निर्णय बिचार सत भाव उमङ्ग जगावे।५९।
सत निर्णय बिन प्रीति प्रतीति अनुराग भाव सब काँचा।
ढीली चाल चले मन मूरख महिमा जुगत न जाँचा।६०।

सुन सुनाय वा काट कूट कहे साध संत की बानी।
निर्णय याका नाम न होई वह नहिं पय है पानी।६१।
अनुरागी के प्रश्न और शंका गहरे कहीं जो उपजें।
सुन कर कहें मौज उत्तर नहिं वास्तव हिय में लरजें।६२।
जो कहुँ जिज्ञासू अरु खोजी या जुक्ती नहिं माना।
अर्ज़ कीन कर दया बतावो मैं हूँ अति अनजाना।६३।
तो फिर क्रोध भरे उपदेशक कहा यह जन है बिरोधी।
यासे चर्चा करूँ न कबही याकी मति है ओछी।६४।
अस२ब्यर्थ स्वाँग रचि जो जिव बनें साध अरु संता।
करें हानि अपनी और उनकी जो चालें उन पंथा।६५।
याते निर्णय गहरी पूरी निर्मल अनुभव रूपा।
भक्तिवन्त अनुरागी जन को अम्मृत है भवकूपा।६६।
या बिधि भेद खुले क़ुदरत का मिटे भर्म अज्ञाना।
सारी रचना संत भेद की देन लगे परमाना।६७।
जेती है मनुष्य की विद्या जेती मर्म रचना की।
करें सिद्ध सब संत बचन को नित नवीन दे साखी।६८।
सुरतवन्त अनुरागी प्रेमी निरपच्छी चितसीला।
रग रग तार तार रचना में परखें प्रीतम लीला।६९।
अन्ध घोर अस्थूल भूल भ्रम खान जो रचा पसारा।
वाही में अस भक्तन झलके अद्भुत नूर अपारा।७०।
सभी रीति सब दशा जगत की सभी कथा सुख दुख की।
दरसन लगें मौज प्यारे की नहिं करतूत मनुष की।७१।
लगे मौज वह परम पियारी दयाधार सम दीसे।
भाव बढ़ावन खेद मिटावन प्रिय लागे अति जी से।७२।

अस परतीति होय दृढ़ गहिरी अटल अडोल अखंडा ।
डोले घटे न पलटे रत्ती पलट जाय ब्रह्मंडा ।७३।
अस निश्चय करनी करवावे अघट उमङ्ग जगावे ।
परमारथ अनमोल रतन होय सर्बोपरि मन भावे ।७४।
जग ब्योहार कार जीवन में एक अर्थ रह जावे ।
परम अर्थ जा में सिध होवे आठ पहर वहि भावे ।७५।

प्रेमसमाचार

सत निर्णय सतसंग सार अस निश्चय हिय में लावे ।
संत साध निज प्रेमी सँग बिन यह फल हाथ न आवे ।७६।
पर अस अम्मृतखान संग नित कोइ बिरले जिव पावें ।
और जीव सब जबही पावें जब जब सतसँग आवें ।७७।
कथा बारता चर्चा मत की सुनन रहे नित इच्छा ।
चित अकुलात रहे भक्तन का बिन पाये निज शिच्छा ।७८।
समाचार प्रीतम समाज का खोज ढूँढ़ नहिं पावें ।
जो पावें कुछ उल्टी सुल्टी तो विशेष अकुलावें ।७९।
अस बिचार प्रेमी भक्तन की सेवा होवे भारी ।
समाचार यह प्रेम प्रीति का कीनी अबके जारी ।८०।
जो जो भेद मनोहर अद्भुत सतसँग में होंय बरनन ।
वाको देश बिदेश भक्त जन पढ़ सुन होंय मगन मन ।८१।
समाचार सतसंग सार का भी अस नित मिल जावे ।
भक्तन का भी हाल चाल कुछ जब तब सुनन में आवे ।८२।
उत्तर भी शंका प्रश्न के प्रेमी जन अस पावें ।
दूर देश बसि होंय निकट अस सतसँग लाभ उठावें ।८३।

कुछ संक्षेप अर्थ टीका भी संत साध बानी की।
होंय बर्नन चैतन्य रीति से ललित मनोहर नीकी।८४।
और अनेकन विषय भक्ति परमारथ सतसंगत के।
समाचार की प्रेमधार में नित नवीन रँग झलके।८५।

बिनती

ऐसी निर्मल सीतल सेवा बिना दया कस होई।
बिनय करूँ कर जोरि नाथ से करो मौज अब सोई।८६।
पिता दयाल दाता गुरु समरथ प्रीतम राधास्वामी।
सुनो टेर मेरी टुक प्यारे मैं हूँ दास निकामी।८७।
समाचार तुम्हरी महिमा के तुमही कहन सिखावो।
भक्तिभाव और प्रेम प्रीति की तुमही रीति बताओ।८८।
जो अस मौज करो मेरे प्यारे क्या महिमा होय बर्नन।
समाचार नित सुनत भक्तजन होयँ आनन्द मगन मन।८९।
भूले भटके संसय मारे प्रेमी दीन बेचारे।
उनकी भी सुधि लो अस दाता करें बिलास अब सारे।९०।
पढ़ि गुनि तुम्हरे समाचार सब करें भूल भ्रम नाशा।
मानो अर्ज़ दास दासन की करो जगत परकाशा।९१।
"आये भवजल नाव लगाई" करो खेइ अब पारा।
"जल्दी करो देर क्यों धारो" मत छाँड़ो मँझधारा।९२।
"आस आस में बहु दिन बीते" अब कब तक तरसावो।
दीन अधीन चीन्ह मोहि प्यारे दया धार उमँगावो।९३।
"देर देर में होत अकाजा" दिन बहु बीते जाते।
हे दाता हे समरथ स्वामी करो प्रेम रस माते।९४।

हिलमिल तुम्हरे चरनसरन सब करें आनन्द बिलासा ।
होय भक्ती परचार अपारा भूल भर्म होयँ नासा ।९५।
रहो गुप्त नहिं मौज होय कहुँ देवन पता ठिकाना ।
तो उन दीजे सुमति दीनता बिरह खोज का दाना ।९६।
जा में चलें कुपंथ न कोई कृतघिन[1] से बच जावें ।
प्रेमी जन सँग भाव प्रीति कर हिलमिल जुगति कमावें ।९७।
नहिं अटकें काशी पर्यागा फँसें न कुल मर्जादा ।
नहिं खद्योत-सभा कोइ भटकें भूलें सब बकवादा ।९८।
केवल आस दरस की तुम्हरे तुम बिन जग अँधियारी ।
जो नहिं मिलो फिरूँ झखमारत कासे कहूँ पुकारी ।९९।
जहाँ बिराजो वहीं बुलावो जिन छाँड़ो मग माहीं ।
मेहर दया से हम दासन को राखो चरनन छाहीं ।१००।
समाचार नित पढ़न सुनन का यह फल पूरा दीजे ।
गुप्त प्रगट जस चाहो दाता सबको चरनन लीजे ।१०१।

१—कृतघ्नी होने से ।

राधास्वामी दयाल की दया
राधास्वामी सहाय

प्रेम-समाचार

१—परम पुरुष पूरन धनी कुल मालिक राधास्वामी दयाल ने जीवों पर अति दया करके संसार में परम संत सतगुरु रूप धारण किया और जगत् उद्धार के परम उन्नति का कार्य आरम्भ फ़र्माया। इस मेहर और दया की महिमा जैसी अनन्त और अपार है उसको कौन वर्णन कर सकता है। केवल उनके सच्चे प्रेमी और भक्तजन ही थोड़ी बहुत उनकी दया से उसको बिचार कर चरन सरन दृढ़ करके मन ही मन में मगन होते हैं और कोटान कोट धन्यवाद अपने पिता दयाल को देते हुए निज भागों को सराहते हैं और अपना जन्म सुफल करते हैं। जैसी दया कुल मालिक ने आप आन कर इस समय में करी वह पहिले न तो कभी हुई थी और न हो सकती थी। सच तो यह है कि सत्य उद्धार सिर्फ़ सत्य करतार ही कर सकता है और जब वही दया बिचारे तो सत्य उद्धार के मार्ग का प्रचार हो सकता है।

२–इस संसार में अनेक मत जारी हुए। समय समय पर बड़े बड़े ऋषि मुनि, पीर पैग़म्बर, औलिया, योगी योगेश्वर, अवतार, साध और संत प्रकट हुए और इसमें कोई सन्देह नहीं कि जो सच्चे भेदी किसी धाम के भी आये उन्होंने सच्चा उपकार अपने समय के जीवों का किया और अपने संगियों को अपने चरनों में लगाकर उनको अपना पद बख़्शा और इस तरह पर ऐसे अभ्यासी सेवकों को अपने भेद का स्वयं प्रमाण भी दिया। मगर बानी जो कुछ रची वह या तो सैन-बैन में या साधारण बयान के तौर पर, जो उस ज़माने के भोले भाले जीवों के वास्ते मुनासिब था, मगर इस समय में जबकि विद्या का प्रचार बहुत हुआ और गहिरी निर्णय-शक्ति जीवों की जागने लगी तो ज़ाहिर है कि किसी बात को महज़ कथनमात्र से कोई नहीं मान सकता और इसी कारण ऐसे मतों के भेद को आम लोग ज़्यादातर रोचक या भयानक समझने लगे और सिर्फ़ रस्म के मुताबिक़ या ताज़ीम के तौर पर उनको मानने लगे क्योंकि वह असर रखने वाली प्रतीति, जो असली कार्रवाई कराकर उस भेद का प्रत्यक्ष ज्ञान दिलाने वाली है, बिना माक़ूल और बासबूत बयान के क्योंकर आ सकती है बल्कि इसी वजह से आम ख़्याल तालीमयाफ़्ता दुनिया में यह फैल गया कि परमार्थी बातें सिर्फ़ विश्वास और मानने की हैं, इल्मी तरीक़ और दलील से वह सिद्ध हो ही नहीं

सकतीं। ऐसे समय में जो दया करके कुल मालिक राधास्वामी दयाल ने महा चैतन्य और निर्मल मार्ग जीव के सत्य उद्धार का ज़ाहिर फ़र्माया उसका शुक्रिया क्योंकर अदा हो सकता है। उसमें न महज़ आदि और कुल मालिक और उसकी सम्पूर्ण रचना का भेद ही ज़ाहिर फ़र्माया और अमली युक्ति सच्चे उद्धार की सिखला कर अपनी दया मेहर के बल से जीते जी उसके स्वयं प्रमाण मिलने का ज़रिया बख़्शा, बल्कि कुल भेद और जुक्ति को निहायत आसान सिल्सिलेवार और क़ुदरती सबूत के साथ ज़ाहिर फ़र्माया जिसको यथार्थ निर्णय विचार करने से अवश्य चैतन्य और बाअसर विश्वास हृदय में पैदा हो सकता है और सच्चे मालिक से, जो कि सब रचना का परम पिता है, बाक़ायदा अभ्यास करके जीते जी मिलने की निस्सन्देह आशा उत्पन्न हो सकती है और ज्यों ज्यों संसार में क़ानून क़ुदरत के रम्ज़ का इल्म बढ़ता जाता है त्यों त्यों और भी राधास्वामी दयाल के अद्भुत भेद का गहिर गंभीर मतलब समझ में आता जाता है। ऐसी अनोखी दया की क्या महिमा वर्णन हो सकती है।

३—हुज़ूर राधास्वामी दयाल के कलाम में, जो उन्होंने अपने तीनों रूपों से फ़रमाया है, सम्पूर्ण भेद विधिपूर्वक मौजूद है। परम पिता स्वामी जी महाराज के सूत्ररूपी गहरे और ऊँचे कलाम में और परम दाता हुज़ूर महाराज की महा मनोहर प्रेम-लहर-रूपी बानी में और

परम शिक्षक महाराज साहब के महा चैतन्य और अपूर्व निर्णय सहित बचनों में जो अनमोल रत्न भरे हुए हैं उनको राधास्वामी दयाल के प्रेमीजन थोड़ा बहुत सब ही जानते हैं और उनका सदा पाठ करके आनन्द लेते रहते हैं। पर ऐसी बानी का पूर्ण लाभ उठाने और गहरा रस लेने के वास्ते यह भी अवश्य है कि सत्त-शिष्य-रूपी[1] कथन मनन व निर्णय विचार से भली भाँति उनको अन्तर में ऐसा बसाया जावे कि उनके तेज से अंधकार-रूपी संशय भ्रम का नाश होकर सत्य प्रतीति और प्रीति का प्रकाश हृदय में छा जावे। ज़ाहिर है कि बिना सच्चे सतसंग के प्राप्त हुए यह कैसे बन आवे और सतसंग में सदा शिरकत सब को मुमकिन नहीं है। इसलिये यह 'प्रेमसमाचार' सब भक्तजनों की मुद्दत की आरज़ू के मुताबिक जारी किया जाता है ताकि इसके द्वारा दूरदेशी प्रेमीजनों को भी सतसंग की कैफ़ियत और यथार्थ निर्णय विचार का लाभ थोड़ा बहुत प्राप्त होता रहे।

४–'प्रेमसमाचार' ज़्यादातर तो राधास्वामी मत के उपदेशियों ही के वास्ते जारी किया जाता है। इसलिये इसमें ऐसी इब्तदाई बातों का, जिनको अभ्यासी प्रेमी कमोबेश सब समझते हैं, ज़्यादा बिस्तार के साथ वर्णन करना ज़रूर न होगा। ऐसे अमली और ज़रूरी विषयों पर ज़्यादा तवज्जुह दिखाई जावेगी जो भक्तजनों के रोज़ाना तजरुबे के मुताबिक़ सदा भक्ति भाव और

१—सच्चे शिष्य के समान।

प्रेम प्रीति के बढ़ाने और अभ्यास में तरक्क़ी कराने में मददगार हों। अलबत्ता इस सिलसिले में इस पत्र का एक ख़ास मतलब यह होगा कि संतों के भेद, जिनकी नवीन और अनोखी तस्दीक़ रोज़ बरोज़ संसार में सब इल्मों की और ख़ासकर इल्म सायन्स (Science) की अचरज तरक़्क़ी और गहरी तहक़ीक़ात से प्रकट होती आती है, सहज रीति से वर्णन किये जावें। जबकि परम चैतन्य धार इस रचना में आई तो अवश्य है कि इस रचना को महा विशेष चैतन्य प्राप्त हुआ। ऐसे प्रकाश से अलावा सच्चे परमार्थ के भारी प्रचार होने के जीवों की कुल चैतन्य कार्रवाई में भी भारी असर नमूदार होना लाज़िमी है और इस वजह से क़ुदरत के ऐसे गहिर गंभीर भेदों का प्रकट होना ज़रूर है जो महा अचरज मालूम हों। दया से ऐसा ही संसार में होता हुआ भी नज़राई दे रहा है। रोज़ बरोज़ ऐसे ऐसे छिपे राज़ और अचरज रम्ज़ ज़ाहिर होते आते हैं जो पहले बिल्कुल अनहोनी और नामुमकिन समझे गये थे और जिनके ज़रिये से मनुष्य के कारोबार में हैरतअंगेज़ आसानी और कैफ़ियत पैदा होती जाती है और ख़्यालात में भारी रद्दोबदल होता जाता है और जिनसे नया जोश, नई उम्मीदें, बुलन्द हौसले दिलों में लहराने लगे हैं और दुनिया में किसी भारी बिलास के समय की आमद की इन्तिज़ार पैदा होने लगी है। पर जब कि मालिक की इस लीला में जहाँ तहाँ

से झलक ऐसी बातों की भी आनी शुरू होवे जिनमें अचरजी और अनोखी तस्दीक़ संत बचन की मिले और जिनके ज़रिये से अपने प्रीतम का हाथ कुछ कुछ रचना के कुल करोबार में दरसने लगे और रफ़्ता रफ़्ता हर जानिब से सदा[1] उसकी मौजूदगी की उठने लगे और सब ही इल्म व हुनर उसका पता देने लगें फिर जो भारी लाभ और गहिरी आनन्ददायक प्रतीति ऐसी बातों के निर्णय विचार और निरख परख से सच्चे प्रेमियों के हृदय में उत्पन्न होगी उसकी महिमा क्या बयान हो सकती है? इसलिये ऐसे निर्णय विचार पर जब तब तवज्जुह दिलाना 'प्रेमसमाचार' का एक ख़ास अंग होगा।

५—संतों के भेद का साधारण निर्णय भी, जो परमार्थ की अमली कार्रवाई में और संशय भ्रम के दूर कराने में मददगार हो, 'समाचार' में दर्ज होते रहेंगे और इस सिलसिले में कभी कभी इब्तदाई भेद, जो ग़ैरउपदेशी खोजियों के समझने के लायक़ हों, दर्ज किये जावेंगे।

६—जब तब संतों की बानी व बचन के अर्थ भी लिखे जावेंगे जिसमें उनके सही मतलब समझने में मदद मिले। संतों की बानी ज़ाहिरा आसान मालूम होती है और साधारण भक्ति प्रेम के बयान मालूम होते हैं मगर जो गूढ़ अर्थ और गहरे भेद उनमें मौजूद हैं ज़रा डूबने से ही समझ में आ सकते हैं।

१—आवाज़।

७–प्रेमी जनों के सवालों के जवाब भी, जो परमार्थ के मुतअल्लिक़ हों, ज़रूरी निर्णय के साथ 'समाचार' में दर्ज किये जावेंगे।

८–अगर कोई सतसंगी कभी कोई मुफ़ीद मज़मून किसी परमार्थी विषय पर भेजेगा तो ऐसा मज़मून ज़रूरी इस्लाह के साथ (आम तौर पर मय नाम भेजने वाले के) छाप दिया जावेगा। ग़रज़ इसकी यह है कि सतसंगियों में सच्चे निर्णय विचार की मुनासिब उमंग पैदा हो जिससे भूल भ्रम दूर हों और परमार्थ के भेद को चैतन्य रीति से ख़ूब छान बीन कर समझने का शौक़ पैदा हो और ग़लत सलत बातचीत करने और शक में आप पड़ने या दूसरों को डालने से बचाव होता रहे।

९–चूँकि सच्चे परमार्थ में महज़ बोलचाल के बनाव और सँवार और किसी ख़ास ज़बान की टेक से कोई फ़ायदा मुनहसिर नहीं और ऐसा करने से सर्व-साधारण लोगों के समझने में दिक़्क़त और हर्ज वाक़े होता है और सन्तों ने हमेशा सहज बोलचाल को ही अपनी भाषा क़रार दिया है जिसको सब लोग आसानी से समझते हैं आम इससे कि उसमें किसी ज़बान के लफ़्ज़ शामिल क्यों न हों। इसलिये 'समाचार' की वही भाषा रहेगी जो सब मामूली और थोड़े पढ़े लिखे लोग भी बख़ूबी समझ सकें। अलबत्ता चूँकि सायन्स और

और इल्मों की ज्यों ज्यों तरक़्क़ी हो रही है उनके नये नये लफ़्ज़ बनते चले जाते हैं और उनका तर्जुमा हिन्दुस्तानी बोली में मौजूद नहीं है और अगर कोई तर्जुमा संस्कृत वग़ैरह में बनाये जाने की कोशिश हो तो वह उससे कम मुश्किल न होगा इसलिये ऐसे लफ़्ज़ों को बजिन्सहू इस्तेमाल करना और उनका मतलब दर्ज कर देना 'समाचार' के निर्णय बिचार में ज़्यादा मुनासिब तरीक़ होगा।

१०–कभी कभी कोई कड़ियाँ प्रेमियों के तजरुबे के मुताबिक़ भेद या प्रेम या चितावनी वग़ैरह की भी दर्ज की जावेंगी।

११–सतसँग और सतसंगियों के मुतअल्लिक़ अगर कोई बात आम इत्तिला के क़ाबिल होगी वक़्तन् फ़वक़्तन् लिखी जावेगी।

१२–'समाचार' को कुल दुनियवी बातों से, जिनका कोई तअल्लुक़ परमार्थ से नहीं है या जिनमें से कोई परमार्थी नतीजा नहीं निकलता है, कोई वास्ता न होगा।

१३–चूँकि परमार्थी भूल भ्रम दूर करना और भक्त जनों में सच्चा प्यार-भाव और भाईचारा मज़बूत करना और राधास्वामी-मण्डली को परम पिता की दया के लायक़ निर्मल और पवित्र बनाना 'समाचार' का फ़र्ज़ होगा इस वास्ते मुनासिब होगा कि 'समाचार' में बिला किसी रू रिआयत के वाजिब राय व सलाह उन सब

मुज़िर चाल ढाल और हालत और कार्रवाई की बाबत दी जावे जो उसमें विघ्नकारक मालूम हों और ऐसे शुभ मतलब के हासिल करने के निमित्त जो कोई प्रेमी भाई (चाहे वह किसी ख़्याल के होवें) कोई तहरीर भेजेंगे वह भी 'समाचार' में ख़ुशी के साथ दर्ज कर दी जावेगी।

१४-कुल मालिक राधास्वामी दयाल ने जो ऊँचा और गहिरा मत जारी किया वह ज़रूर एक दिन सब जीवों के उपकार के लिये तमाम संसार में फैलेगा और अवश्य वह शुभ घड़ी आवेगी जबकि इस आलीशान परमार्थी कंगूरे का नूर सारी रचना को अपने परम प्रकाश और तेज से महाशोभायमान करके जीवों के सत्य उद्धार की अपार लीला दरसावेगा। फिर जो मालिक की दया से सब प्रेमी जन सिमट कर इस अद्भुत मन्दिर की एक ईंट भी रखने को पदवी को प्राप्त हों उनके भागों की क्या महिमा वर्णन हो सकती है। इसलिये ऐसे सिमटाव और एकत्रता प्रकट कराने की सेवा, जो केवल परम पुरुष पूरन धनी राधास्वामी दयाल की दया मेहर के आसरे पूर्ण हो सकतो है, 'प्रेम-समाचार' का सदा परम धर्म रहेगा।

'दया करो मेरे साइयाँ देव प्रेम की दात।
दुख सुख कुछ ब्यापे नहीं छूटे सब उत्पात ॥'

परम गुरु

१—परम गुरु नाम परम पुरुष और आदि प्रकाशक का है, दूसरा कोई रचना में इस परम पदवी का अधिकारी नहीं हो सकता। 'गुरु' शब्द का शब्दार्थ (लफ़्ज़ी मानी) यह है कि जो अँधेरे में चाँदना करे। दरअसल तो वे सब सच्चे महापुरुष, जो कि भेजे हुए अपने अपने धनी के इस संसार में प्रकट हुए, सच्चे गुरु और समर्थ हुए और जिन जिन जीवों को उन्होंने अपने चरनों में लगाकर अन्तरी अभ्यास कराया उनको अपनी दया के बल से अपना स्थान बख़्शा और इस सच्चे उपकार का काम उस वक़्त तक बराबर जारी रहा जब तक कि उनके घरों में भेदी और अभ्यासी गुरु प्रकट होते रहे। और इस नाम से सब सच्चे पैग़म्बर, वली, अवतार, जोगी, जोगेश्वर, साध और संत को पुकारना वाजिब है। इस संसार के घोर अंधकार में वे ही प्रकाशक हुए और गुरु शब्द के साधारण अर्थ के अनुसार ऐसे महात्माओं की गुरु पदवी यथार्थ मालूम होती है। मगर गुरु शब्द के मानी पर गहरी दृष्टि डालने से इससे भी ज़्यादा गहिर गंभीर अर्थ प्रकट होता है। वह परम पुरुष परम चेतन शक्ति अनादि और अनन्त है और सब रचना उसी को प्रकट की हुई है,

वही सत्य करतार है। इसलिये जिस सत्य करतार या परम शक्ति ने अरूप और अंधकार दशा में से रूपवान और तेजमय रचना का प्रकाश किया वही आदि और निज प्रकाशक हुआ और इसलिये परम गुरु नाम सिर्फ़ उसी सत्य करतार परम पुरुष पूरन धनी कुल मालिक का हो सकता है।

२–रचना से पेश्तर वह मालिक प्रेम और चैतन्य का भंडार गुप्त यानी अनाम और अरूप था और न्यून-अधिक-भाव से था। जब मौज रचना की हुई तो स्वामी चरनों से यानी उस अधिक अंग से धार उठी और शब्द-स्वरूप महाप्रकाशवान होकर न्यून अंग को रूपवान दशा में लाई। शब्द नाम महज़ आवाज़ का नहीं है। शक्ति जब तक गुप्त है अनाम और अरूप है। शक्ति जब प्रकट होती है तो शब्दस्वरूप है और वही शब्द उसका निज नाम और निज रूप है। कुल मालिक या परम शक्ति ने जब अनाम और अरूप दशा से प्रकट होने की मौज की तो वह आदि शब्द स्वरूप होकर दरसा और वही शब्द उस मालिक का निज रूप और निज नाम हुआ। वही शब्द राधास्वामी शब्द है। यही नाम असली व ज़ाती कुल मालिक का है। चूँकि वह मालिक परम प्रेम का अपार और अनन्त भण्डार है और प्रेम ही उसका निज वर्णन है इसलिये उसका प्रकट यानी शब्दस्वरूप भी प्रेम की यानी चैतन्य आकर्षण की धार है। आकर्षण

का निज स्वभाव और तात्पर्य यही है कि जिस वस्तु पर उसका असर हो उसको खींचकर अपनी दशा में कर दे। इस स्वभाव की कार्रवाई के ये अंग लाज़िमी हैं–पहले, खिंचने वाली वस्तु और खींचने वाली शक्ति में जो दशा रुकावट पैदा करने वाली हो वह दूर की जावे। दूसरे, वह शक्ति उस वस्तु को खींचकर अपनी दशा में कर देवे। इस तौर पर कुल मालिक राधास्वामी दयाल ने आदि-शब्द रूप में प्रकट होकर न्यून अंग को मथन करके रूपवान किया और कुल रचना को न्यून अंग से ज़ाहिर किया। फ़र्माया है:—

"उठी स्वामीचरनों से एक आदि धार।
हुई कुल्ल रचना की करतार यार॥
उसी आदि धारा का राधा है नाम।
उसी से सरें सबके कारज तमाम॥"

इसलिये राधास्वामी शब्द ही कुल रचना का सत्य करतार और परम प्रकाशक है और वही परम प्रकाशक राधास्वामी दयाल परम गुरु हैं।

३–जब कि न्यून अंग की अरूप दशा को मथन करके राधास्वामी शब्द ने रूपवान किया और जब कि बिना प्रेरणा इस परम शक्ति के यह रचना प्रकट नहीं हो सकती थी तो यह भी ज़ाहिर है कि राधा-स्वामी शब्द ही की सहायता रचना को इस प्रकट दशा में ठहरा सकती है यानी अगर यह अनुमान

किया जा सके कि इस धार का असर रचना से हट जावे तो रचना बदस्तूर अपनी गुप्त और अरूप दशा को प्राप्त होगी और रूपवान दशा का अभाव हो जावेगा। इसलिये यह राधास्वामी शब्द सिर्फ़ सत्य करतार ही नहीं है बल्कि यही सत्य पालनहार भी है और यही रचना की जान है।

कड़ी—"गुरु प्यारे चरन रचना की जान।"

४-रचना के तीन बड़े भाग हैं—एक निर्मल चैतन्य देश, दूसरा निर्मल चैतन्य और शुद्ध माया देश, तीसरा निर्मल चैतन्य और मलिन माया देश। निर्मल चैतन्य देश अविनाशी और सदा एकरस है क्योंकि वह रचना मुफ़रिद है यानी सिर्फ़ एक वस्तु निर्मल चैतन्य से हुई है—और किसी शै की मिलौनी उसमें नहीं है—इसलिये उसकी दशा सदा एकरस, अनन्त और अविनाशी है। मगर दूसरे और तीसरे भाग में निर्मल चैतन्य और शुद्ध या मलिन माया से मिल कर रचना हुई है। चूँकि निर्मल चैतन्य और माया (चाहे वह शुद्ध हो या मलिन) तद्रूप नहीं हो सकते इसलिये ऐसी रचना सदा एकरस क़ायम नहीं रह सकती और इसलिये शुद्ध और मलिन माया की मिलौनी के देश, जिनको ब्रह्माण्ड और पिण्ड कहते हैं, नाशवान हुए यानी जिस निर्मल चैतन्य या सुरत-अंश के वसीले से यह रचना ज़ाहिर और क़ायम है वह माया के साथ तद्रूप

नहीं हो सकती और मुनासिब समय पर वह सुरत-अंश अपने भंडार को ज़रूर लौटेगी। उस समय इस रचना का अभाव होना लाज़िमी होगा। इस सम्पूर्ण अभाव को महाप्रलय कहते हैं। इस वजह से ब्रह्माण्ड और पिण्ड नाशवान हैं। अब निर्मल चैतन्य अंश की वापिसी अपने भंडार को बिना मदद और बल समर्थ निर्मल चैतन्य धार के नहीं हो सकती इसलिये ज़रूर हुआ कि वह निज धार इस रचना में प्रकट हो कर सुरतों को अपने चरनों में जोड़ कर अपने धाम को ले जावे। और ज़ाहिर है कि जब उस धार के इस रचना में प्रकट होने का यह असर है कि सुरत-अंश, जिसके आसरे माया की रचना खड़ी है, इस में से निकल जावे तो अवश्य मायिक रचना का अभाव भी इसी वजह से होगा। इसलिये सुरत-अंश के सम्पूर्ण उद्धार का लाज़िमी नतीजा मायिक रचना का सम्पूर्ण अभाव है। इस तौर पर रोशन है कि वही निज धार, जो रचना की सत्य करतार और सत्य पालनहार है, सुरत-अंश की सत्य उद्धारकर्ता भी है और इस कारण नाशवान रचना के सम्पूर्ण अभाव कराने वाली भी वही धार है। इसलिये रचनहार पालनहार और उद्धारकर्ता आप कुलमालिक राधास्वामी दयाल हैं और परम गुरु पदवी उन्हीं की है। रचना में कोई दूसरा इस पदवी का अधिकारी नहीं है।

फ़र्माया है—

"गुरु प्यारे चरन रचना की जान ॥
आदि धार चेतन जो निकसी ।
उसने रची सब रचना आन ॥
वही धार गुरुचरन पहिचानो ।
वोही पिंड ब्रह्मंड समान ॥"

५–जब अपार दया राधास्वामी दयाल की उमँड़ती है और समय सुरतों के पूर्ण उद्धार का आता है तो वे निर्मल चैतन्य लहररूप होकर इस संसार में परम संत सतगुरु स्वरूप धारण करते हैं और निज उबार का कार्य आरम्भ फ़र्माते हैं। पहले जो योगी योगेश्वर, अवतार, साध संत इत्यादि प्रकट हुए उन्होंने अपने समय में जीवों का बेशक भारी उपकार किया और उनको ऊँची गति और निर्मलता बख़्शी और उनके बाद भी यह कार्य उस वक़्त तक जारी रहा जब तक कि भेदी व समर्थ जानशीन उनके प्रकट होते रहे। लेकिन जब कि वे भी गुप्त हो गये तो उस असली उपकार का काम बंद हो गया। इससे साफ़ ज़ाहिर है कि ऐसे महात्मा एक मुक़र्ररा कार्य के लिये प्रकट होते रहे और उतने ही कार्य के लिये वे भेजे गये थे, उससे ज़्यादा कार्य जीवों का उनके द्वारा नहीं हो सकता था। कुल मालिक की अपार क़ुदरत और मसलहत में इन महापुरुषों के भेजे

जाने का यह अर्थ साफ़ मालूम है कि बतदरीज (क्रमशः) वे रचना को निर्मल और पवित्र उस परम पिता के चरणों के बिराजने योग्य बनावें और जीवों को उन परम गुरु की उद्धारशिक्षा के लायक़ चैतन्य और अधिकारी बना देवें। इसलिये इस मुक़र्रा काम के पूर्ण होने के बाद उनके असली मत और कार्रवाई का गुप्त होना अवश्य हुआ। लेकिन जबकि जीवों के पूर्बले भाग जागे और पूर्ण उद्धार का समय आया और कुल मालिक आप परम गुरु रूप धारण करके प्रकट हुए तो ज़ाहिर है कि जब तक पूर्ण जगत् का उद्धार न होगा जो कार्रवाई कुल मालिक ने आप आन कर जारी फ़र्माई क्योंकर बंद हो सकती है। जो अर्थ उस परम धार के संसार में आने का है उसके बिना पूर्ण किये वह अपने धाम को कैसे लौट सकती है? इसलिये अवश्य है कि यह अपार मार्ग राधास्वामी-पंथ, जो कि कुलमालिक हुज़ूर राधास्वामी दयाल ने आप आन कर प्रकट फ़र्माया, जुगान जुग में, देश देशान्तर में जारी रह कर सब त्रिलोकियों के जीवों का पूर्ण उद्धार करेगा और सर्ब सुरत-अंश को निज धाम में बास देकर इस रचना से गुप्त होगा और वही समय नाशवान रचना के पूर्ण अभाव यानी महाप्रलय का भी होगा। इस यथार्थ विचार को याद रख कर हुज़ूर राधास्वामी

दयाल के प्रेमी जीवों को कभी ऐसे भ्रम को हृदय में जगह न देनी चाहिये कि यह मत भी मिस्ल और मतों के शायद देर अबेर गुप्त हो सकता है। ऐसा भ्रम मत के सिद्धान्त और भेद की अनजानता की दलील है।

६–अब यह कि किस तरह यह कार्रवाई जीवों के उद्धार की मालिक जारी रखता है–समझना ज़रूर है। जबकि यह मालूम हुआ कि कुल मालिक ही परम गुरु है तो यह भी ज़रूर हुआ कि वही दाता दयाल दया करके आप अवतार धारण करके संसार में आवे। वही धार, जो इस तरह प्रकट होती है, गुरुधार या निजधार है। वही सदा इस उद्धार के काम को जारी रखती है। इसलिये उसका सदा इस संसार में मौजूद रहना लाज़िमी है। और चूँकि सिवाय मनुष्य-चोले के और कोई देह इस देश में ऐसी नहीं है जहाँ पर चैतन्य की कार्रवाई प्रकट हो—अलावा इसके नर-शरीर की महिमा रचना भर के सब क़िस्म की देहों से इस वजह से बहुत भारी है कि उसमें छः चक्र पिंड के कुल कारकुन हैं और चूँकि वे ब्रह्मांड के छः कमलों की छाया हैं इसलिये जो द्वारे ब्रह्मांड के छः कमलों के इस देह में हैं वे पूरे कारकुन हो सकते हैं और चूँकि ब्रह्मांड के छः कमल निर्मल चैतन्य धाम के छः पदम के आधीन और छाया हैं इसलिये वे भी छः पदम अभ्यास से पूरे जगाये जा सकते हैं, इस तौर पर इस मनुष्य-शरीर

को मालिक ने रचना का कामिल और पूरा नमूना बनाया है और इस वजह से इस अद्भुत रूप की बराबरी रचना में कोई देह नहीं कर सकती। इसमें यह क़ुदरत है कि अठारहों द्वारे, जो आदि से अन्त तक की रचना से मिले हुए हैं, कारकुन हो सकते हैं। इसलिये निजधाम से गुरुधार चलकर सिर्फ़ ऐसी देह ही में ठेका ले सकती है और ऐसी देह ही में विराजने के कारण तमाम रचना को उसका फ़ैज़ हासिल हो सकता है। इस वजह से गुरुधार नर-स्वरूप में प्रकट होती है। ऐसे महा दयाल नर-स्वरूप को, जो मालिक धारण करता है, परम संत सतगुरु कहते हैं। ऐसे परम सतगुरु स्वतः अवतार मालिक के हैं, वे सदा गुरुरूप हैं और पिंड में उतर कर आप ही आप निजधाम को उलटते हैं। फ़रमाया है:—

"अललपच्छ सम फिर उलटामी।
अस मेरे प्यारे राधास्वामी॥"

उनकी महिमा अकह व अपार है। पिंड ब्रह्मांड और निर्मल चैतन्य धाम के सर्व धनी उनके आधीन है। हुज़ूर राधास्वामी दयाल ने फ़रमाया हैः—

"गुरु रूप धरा राधास्वामी।
गुरु से बड़ नहीं अनामी।"

और यहाँ तक इशारा दिया कि बिना उस स्वरूप की दया और मदद के, जो मालिक भी जीव

को तारना चाहे तो नहीं तार सकता (देखो बचन नम्बर ११७ सारबचन नसर)। अब चूँकि मालिक ने जो रचना रची है और जो कुछ रीति और क़ानून उसमें मुक़र्रर किये हैं उनकी अगर वह ख़ुद मर्यादा न रक्खे और सहायता न करे तो वे नष्ट हो जावें और रचना ठहर न सके इसलिये पहला नर-स्वरूप जो मालिक दया करके धारण करता है उसी को सदा नहीं क़ायम रखता। इस मंडल के क़ानून के मुताबिक़ उसको मुनासिब समय पर गुप्त करके नये स्वरूप में बिराजता है और इस तरह पर स्वरूपों के तब्दील का सिल्सिला जारी रखता है। यह ऊपर बयान हो चुका है कि गुरु-धार के इस रचना में ठहराव के लिये नर-स्वरूप में उसका ठेका लेना लाज़िमी है, इसलिये प्रथम स्वरूप के गुप्त करने के समय दूसरे ऐसे नर-स्वरूप का मौजूद रहना लाज़िमी है जो उस धार के बिराजने व ठहरने का पात्र बन सके। मगर साधारण मनुष्य-चोला, जो कि जीवों के शुभ अशुभ कर्मों से बुना गया है और जिसमें बिकारों की धार चल रही है और जिसके अन्तर में मायिक मलीनता छाई हुई है और जिसमें निबल और दीनगति जीव बैठा हुआ है, उस परम धार के चरन पधारने और सिंहासन बनाने के लायक़ कैसे हो सकता है? इसलिये साधारण जीव का चोला,

चाहे वह जीव किसी दर्जे का क्यों न होवे, गुरु-धार के ठेका लेने का पात्र कभी नहीं हो सकता। इस वास्ते मालिक ने यह क़ायदा रक्खा है कि जब वह गुरु-रूप धारण करके प्रकट होता है तो अति दया करके अपने निज अंश को भी लाता है। ऐसी निज अंश को परम संत कहते हैं। वे सच्चे और पूरे आशिक़ मालिक कुल के हैं। वे अपने प्रीतम के साथ अपने धाम में पूरी सारूप्य और सायुज्य गति रखते हैं। वे परम हितकारी जीवों के हैं क्योंकि वे अपने पिता-रूप के आज्ञानुसार इस महा मलीन रचना में सिर्फ़ जीवों के उपकार के निमित्त आना मंज़ूर करते हैं। वे ही परम भक्त और गुरुमुख कहलाते हैं। जन्म लेकर मुनासिब समय पर अपने प्रीतम के चरनों में आ मिलते हैं और गहरी और अद्भुत भक्ति भाव में आप बरत कर जीवों को भक्ति-रीति सिखाते हुए अपने पिता-धार के बल से अपने धाम को उलटते हैं। ऐसी परम निर्मल और महा चैतन्य अंश जिस चोले में प्रकट होती है उसकी महिमा अपार है। वही परम शोभायमान मन्दिर गुरु-धार के बिराजने का हो सकता है। इसलिये जब परम गुरु अपने पहले चोले को गुप्त फ़र्माते हैं तो ऐसे परम भक्त या गुरु-मुख के चोले में आ समाते हैं और चूँकि ऐसी निज अंश या परम संत की अभेद भक्ति पूरी है वे गुरु-धार

से सम्पूर्ण अंग से तद्रूप हो जाते हैं और उस समय से उस घट से जो कार्रवाई जारी होती है वह साक्षात् परम गुरु और मालिक की कार्रवाई है। सेवक-अंग की दशा गुप्त हो जाती है। वह स्वरूप पूर्ण स्वामी का स्वरूप हो गया। इस तौर पर अपनी निज अंशों को इस संसार में प्रकट करके गुरु-धार उद्धार का काम जारी रखती है। इसलिये हमेशा एक वक़्त में एक ही सतगुरु हो सकते हैं और इसी वजह से निज अंश भी हमेशा होनहार गुरू यानी पूरे गुरुमुख ही को कहते हैं। सिवाय इसके और कोई मतलब निज अंश के इस मण्डल में आने का नहीं है। और निज अंश या परम संत भी सिर्फ़ उसी वक़्त गुरू हुए जब पहले स्वरूप को गुप्त करके गुरु-धार ने उनमें प्रवेश किया। गुरु-धार के आवेश के पेश्तर असल में उनकी भी पूर्ण गुरुपदवी नहीं होती। पस कैसी अपरम्पार महिमा पूरे गुरु की हुई, क्या बयान हो सकता है? परम भाग्य जब उदय होते हैं जब ही जीवों का नाता उनके चरनों में जुड़ता है। उसी वक़्त से उनका कार्य सहज में बनना शुरू हो जाता है और वे एक दिन परम पद के अधिकारी हो जाते हैं।

फ़र्माया है:—

"अस गुरु सम कोइ और न आना।
गुरू मिले फिर कहा कमाना॥"

७—ज़ाहिर है कि जबकि पूरे गुरु के मिलने का ऐसा भारी लाभ है और बिना उनके मिले सब जुक्ति व जतन लाहासिल हैं और जगत अँधेरा है तो ऐसे परम हितकारी की खोज और प्राप्ति के लिये जीव को कैसा सच्चा अनुरागी, निष्पक्ष और दीन होना लाज़िमी है। जब तक कि ऐसी तड़प और बिरह, कि जिसमें कोई टेक, पक्ष या कोई दुनियवी मतलब पर भी न मार सके, खोजी के हृदय में न जागेगी कैसे उन दाता से मिलना मुमकिन है? यह तो सच है कि जीव निबल और अन्धा है, यह उनकी क्या परख कर सकता है। जब वे ही परख देवें और अपने को पकड़ावें तो यह चरनों में लगे और भाव लावे। लेकिन ऐसी दया हासिल करने के लिये इसका भी तो धर्म है कि यथाशक्ति कुछ तो जतन करे और वह जतन भी दया करके मालिक ने ऐसा ही रक्खा है कि जिसको सर्वसाधारण जाव थोड़ा बहुत ज़रूर कर सकते हैं। चाहे मन इन्द्री को बस में लाना कठिन हो, चाहे काम, क्रोध, लोभ, मोह को जीतना दुश्वार हो और सात्विकी रहनी धारण करनी मुश्किल हो, पर इतना तो सभी कर सकते हैं कि जैसी भी दीन दशा अपनी क्यों न हो उसी दशा में अपने को अपने प्यारे मालिक के चरनों में डाल कर अन्तर में सदा यह टेर लगाते रहें और प्रण धारण कर लें कि

दुनिया में चाहे जो हो मगर परमार्थ में सिवाय मालिक के और कुछ नहीं चाहिये, मिले तो मालिक ही मिले। भरोसा और बल केवल उन्हीं चरणों का रहे। उन चरणों की प्राप्ति के सिवाय परमार्थ में दूसरी कोई भी आस-वास[1] न रह जावे। ऐसी दशा जिस भक्तजन के अन्तर की है और ऐसी पुकार जिस घट में सदा उठ रही है वह कभी ख़ाली नहीं रह सकता। देर अबेर ज़रूर मालिक उसको अपने दर्शनों से निहाल करेगा। वह कभी इस संसार में गुमराह नहीं हो सकता। इस दशा के तेज के सामने भूल भ्रम उसके घट में पर नहीं मार सकते और न कोई उसकी हानि कर सकता है। इसलिये प्रेमी जीवों को सदा यह याद रख कर कि परम गुरु नाम कुल मालिक राधास्वामी दयाल का है, और वे इस संसार में जगत्-उद्धार के वास्ते प्रकट हुए, और बिना इस कार्य को पूर्ण किये वे अपने धाम को नहीं लौटेंगे, और समय समय पर एक स्वरूप को गुप्त करके दूसरे में विराजमान होकर सदा इस मंडल में मौजूद रहेंगे, और सच्चे बिरही प्रेमी खोजी को ज़रूर मिलेंगे और जब तक प्रकट मेल की मौज न होगी निर्मल परमार्थी जीवों को सच्चे प्रेमीजनों की सोहबत बख़्श कर उनकी पूरी रक्षा फ़रमाते रहेंगे। इस तरह पर

१—आशा व वासना।

यह परम दयाल मार्ग राधास्वामी-पंथ सदा जीता जागता अन्त तक क़ायम रहेगा। सच्चे परमार्थी को सुमति के साथ यह निरख-परख और चौकीदारी अपनी करते रहना ज़रूर है कि उसके परमार्थी कामों में हरगिज़ हरगिज़ कोई संसारी मतलब कभी शामिल न होने पावे या कोई मुज़िर टेक पक्ष दिल में न ठन जावे। ऐसी हालत से परमार्थ के भारी हर्ज और मालिक की दया से महरूम होने का अंदेशा है। सच्चे परमार्थी का हृदय मालिक के मिलने के इन्तिज़ार में सदा खुला और आज़ाद रहना ज़रूर है। बिना इस दशा के कहीं न कहीं अटक जाने का और फिर खोज का द्वार बंद हो जाने का भारी भय रहेगा। इससे ज़्यादा दुर्भाग्यता दूसरी नहीं हो सकती। अगर मालिक दया करके, जहाँ विराजमान होवे, जीव को खींच कर चरणों में लगा लेवे और अपनी परख कुछ बख़्श दे तो अहोभाग्य हैं। फिर तन मन धन से अभ्यास, सतसंग और भक्ति करके अपना जन्म सुफल करना चाहिये। जो ऐसी मौज न होवे तो सतसंगी को यह पूर्ण भरोसा रखकर कि ज़रूर मालिक इस मंडल में मौजूद है और हमारी सुचाल का वह इनाम अवश्य देगा बदस्तूर अपने भजन बन्दगी और अभ्यास में लगे रहना और जहाँ कहीं सच्चे प्रेमी जनों का सतसंग मिले ज़रूर करना

लाज़िमी है। इस सच्ची सोहबत का असर यह होगा कि इसके संशय भ्रम बेशक दूर होंगे, प्रीति प्रतीति में किसी क़दर मज़बूती आवेगी, खोज बजाय बन्द होने के और भी तेज़ होता जावेगा, सतगुरु के मिलने की बिरह-बेकली बढ़ती जावेगी और ऐसे प्रेमी भाइयों की सोहबत दुनिया में सबसे अधिक प्यारी लगेगी और कोई भी सतसंगी, चाहे वह कैसा ही क्यों न हो, अपना अज़ीज़ मालूम होगा क्योंकि वह दशा उसकी थोड़ी बहुत ज़रूर होगी जो इस कड़ी में फ़रमाया है:—

"जो मेरे प्रीतम से प्रीति करे
मोहि प्यारा लागे री।"

जो किसी रीति से या किसी संयोग में भी प्रीतम राधास्वामी दयाल का इष्ट रखता है और सिवाय राधास्वामी दयाल के और कोई दूसरी आस नहीं रखता वह सच्चे प्रेमी को क्यों न अज़ीज़ होगा? अगर वह इसकी निगाह में भूला-भरमा भी मालूम होगा तो भी उस पर दया आवेगी, न कि बेगानियत पैदा होगी। इसलिये ऐसी खोज की हालत में संग का ऐसा असर निहारते चलना निहायत ज़रूरी है। अगर बजाय ऐसे असर पैदा होने के किसी सोहबत से चित्त में बैर बिरोध ईर्षा बढ़ती जावे, खोज बन्द होने लगे, टेक पच्छ की तरक़्क़ी मालूम हो, यथार्थ निर्णय से दिल

भागे, भक्तजनों के साथ प्यार मुहब्बत कम होने लगे तो ज़ाहिर है कि ऐसी सोहबत में कैसे मालिक का मिलना हो सकता है ?

"इनके संग पिया नहिं मिलना ।
पिया मिलें कोइ साध समग में ।"

इसलिये इस परम उत्तम मार्ग में शामिल होकर और परम गुरु कुल मालिक राधास्वामी दयाल की अवश्य मौजूदगी की प्रतीति हृदय में रख कर जो प्रेमी जन अपने भाइयों से सदा प्यार मुहब्बत का रिश्ता क़ायम रक्खे हुए और सब में मिल-जुल कर बिरह और प्रेम के साथ खोज अपने प्यारे मालिक के प्रकट रूप का जारी रक्खेगा और निपट निष्पच्छ होकर अपने अन्तर में संग का असर निहारता रहेगा उसको एक दिन वह समर्थ दाता अवश्य अपनी चरण-शरण में बासा देकर सतसंग के सदा बढ़ते हुए आनन्द व बिलास में मग्न और सरशार करेंगे और निर्मल परमार्थ की परम दात देकर निहाल कर देंगे—

"गुरु तारेंगे हम जानी ।
तू सुरत काहे बौरानी ॥"

मुतफ़र्रिक़ बचन

(१) सच्ची लगन और रगड़ का फल

सायन्स-विद्या का नामी आलिम एडिसन (Edison), जो फ़ोनोग्राफ़ (Phonograph) का ईजाद करने वाला है, एक भारी ज़हीन आदमी है मगर ज़हानत से बहुत बढ़कर उसका माद्दा अचरजी लाग और रगड़ का है, जिसके ज़रिये उसने ऐसी बातों को प्रकट कर दिखाया है जो दूसरों को बिल्कुल अनहोनी मालूम होतीं। फ़ोनोग्राफ़ जैसी नादिर कल का ईजाद करना ही क्या कम अचरजी बात थी, जिसके ज़रिये से तमाम क़िस्म की आवाज़ें अब आसानी से ज़ाहिर हो सकती हैं और सदहा बरस बाद तक गये हुए लोगों की बोली सुनी जा सकती है। ग़ैरमामूली ज़हानत और लाग ऐसे अनोखे यन्त्र के प्रकट करने को लाज़िमी थी। पर जो अचरज रगड़ इस मनुष्य ने सिर्फ़ एक हर्फ़ 'स' के प्रकट कराने में की वह भी सुनने योग्य है। सब हरूफ़ के बोल तो फ़ोनोग्राफ़ से निकले मगर हर्फ़ 'स' का बोल नहीं निकलता था। जब वह शख़्स लफ़्ज़ (अंग्रेज़ी) 'स्पेशिया' (Specia) कल में

बोलता था तो कल सिर्फ़ 'पेशिया' (Pecia) ज़ाहिर करती थी और किसी तरह पर 'स' का उच्चारण नहीं निकलता था। बहुत हैरान हुआ मगर उसने भी पीछा न छोड़ा। एक दम सात महीने तक दिन व रात अठारह अठारह व बीस बीस घंटे वह शख़्स इस एक लफ़्ज़ को कल पर रटता रह गया और आख़िर को उस कल से पूरा लफ्ज़ 'स्पेशिया' (Specia) उच्चारण करा ही के छोड़ा। इस जोश और उमंग और लाग का अन्दाज़ा समझने ही के तअल्लुक़ है। जबकि एक ऐसे बेहक़ीक़त हर्फ़ के बोल को एक कल में से प्रकट कराने के लिये ऐसी भारी रगड़ दरकार थी और जबकि एक संसारी जीव ने केवल दुनियवी लाभ और आनन्द के वास्ते ऐसी अद्भुत लाग से सब कठिनाइयों को बरदाश्त करके उस बोल को प्रकट कर ही लिया तो क्या प्रेमी जन की सच्ची रगड़ से इस क़ुदरती कल मनुष्य-शरीर में से सच्चे नाम की धुन नहीं प्रकट हो सकती? अवश्य हो सकती है। वहाँ तो कल मनुष्य की बनाई हुई और जड़ थी और उस बेचारे उत्साही मनुष्य को युक्ति भी मालूम न थी; घोर अंधकार और निराशता में उसको टटोलना था। पर उसके अचरजी विश्वास और लगन का फल मालिक ने यह दिया कि उस जड़ कल से उसकी चाह के अनुसार आवाज़

प्रकट कराके उसको निहाल कर दिया। प्रेमी जन को तो क़ुद्रती कल मालिक की रची हुई महा अचरजी मिली है जिसके अन्तर में जीती जागती धुन नाम की गुंजार रही है और उसकी प्राप्ति की युक्ति भी मालिक ने बख़्श दी है। फिर जो उत्साह और प्रतीति के साथ नाम की रटन निशाने पर अन्तर में रगड़ के साथ की जावे तो क्यों न वह चैतन्य और समर्थ नाम अन्तर में प्रकट हो कर भक्तजन को निहाल कर देगा? कभी सच्ची रगड़ निष्फल नहीं जा सकती। थोड़े यत्न के बाद निराश हो बैठना मालिक के प्रेमी को शोभा नहीं देता।

---

(२) दुनिया में मांसाहार के बिल्कुल तर्क करने का अचरजी जोश

(१) हुज़ूर राधास्वामी दयाल ने जो सहज युक्ति इस समय में जीवों के सच्चे कल्याण की ज़ाहिर फ़रमाई उसकी कमाई का संयम भी दया करके निहायत सहज रक्खा। मसलन् बाहरी संयमों में खान पान के मुतअल्लिक़ सिर्फ़ इस क़द्र शर्त लाज़िमी रक्खी कि गोश्त और नशे की चीज़ों से क़तई परहेज़ किया जावे। पर मुद्दतों की आदत के सबब से इतने संयम

का भी अंजाम होना बेशुमार जीवों के लिये नामुमकिन मालूम होता था। मसलन् यूरोप और अमेरिका वग़ैरह के लोगों से इन चीज़ों का इस्तेमाल तर्क होना क़तई नामुमकिन मालूम होता था। अनेक बहाने आबोहवा व तन्दुरुस्ती वग़ैरह के क़ायम करके ऐसे लोग बड़ा पक्ष इस क़िस्म के खान पान का अब तक करते आये, जिससे इन लोगों से सुरत-शब्द-योग की कमाई बन आने और तमाम संसार में सच्चे परमार्थ के, मुताबिक़ सन्तों के हुक्म के, भारी प्रचार होने में बड़ा सन्देह मालूम होता था। मगर मालिक की अब एक अनोखी दया यह ज़ाहिर होने लगी है कि ऐसे लोगों में ख़ुद बख़ुद भारी ख़्याल यह पैदा हो रहा है कि गोश्त का खाना मनुष्य के लिये हर हालत में व हर तरह पर मुज़िर है और इसको क़तई त्याग कर फल और अनाज वग़ैरह की ग़िज़ा इख़्तियार करना भारी फ़ायदामन्द है। चुनाँचे इंगलिस्तान में एक गिरोह 'मीटलेस डायट पार्लियामेन्ट' (Meatless Diet Parliament) के नाम से नमूदार हुआ है, जिसका मतलब यह है कि वह मंडली मांस-रहित आहार का यथार्थ प्रचार करे। इस मंडली का उत्साह यह है कि हर फ़न और इल्म और हुनर के बड़े बड़े प्रसिद्ध आलिम और तजरुबेकार लोगों की राय इस विषय में इकट्ठी की जावे और

ख़ूब छान-बीन कर के यथार्थ और कामिल तौर पर यह तय कर दिया जावे कि उसूल से, तजरुबे से और मुस्तनद लोगों के अमलदरामद से साबित होता है कि क़ुदरत ने हरगिज़ मनुष्य के लिये मांस अहार नहीं बनाया है बल्कि इन्सान को हर हालत और आबोहवा में फल और नाज की ग़िज़ा ज़्यादा से ज़्यादा फ़ायदामन्द है। चुनाँचे इंगलिस्तान के अख़बार "पॉपुलर सायंस सिफ़्टिंग्स" (Popular Science Siftings) ने कुछ दिनों से अपने हर परचे में इस विषय पर सिल्सिलेवार रायें ऐसे प्रसिद्ध लोगों की दर्ज करनी शुरू की हैं जिन्होंने महज़ ख़्याली तौर पर नहीं बल्कि मुद्दतों ख़ुद तजरुबा करके और दूसरों से कराके अमली तौर पर यह नतीजा निकाला है कि मांसाहार के बदले नाज और फल की ग़िज़ा मुफ़ीद है। यह राय सिर्फ़ दिमाग़ी काम करने वालों की ही नहीं बल्कि जिस्मानी ताक़त वग़ैरह के भी बड़े बड़े माहिर लोग यही राय दे रहे हैं और यह साबित कर रहे हैं कि मुद्दत से दुनिया में जो यह ख़्याल चला आता है कि गोश्त का खाना किसी किसी आबोहवा में व किसी किसी ख़ास काम के लिये और आम तौर पर ताक़त और तन्दुरुस्ती के लिये लाबुदी है, बिल्कुल ग़लत है। क़ुदरती ग़िज़ा फल व नाज के असर को तजरुबा

करके न आज़माने की वजह से यह भूल चली आ रही है। मुख़्तसर तौर पर उनकी रायों का यह नतीजा निकलता है कि स्वाद के लिये, ताक़त के लिये, दिमाग़ी फ़रहत व क़ुव्वत के लिये, उम्र बढ़ाने के लिये और और भारी मेहनत की बरदाश्त का माद्दा पैदा करने के लिये क़ुदरत ने मनुष्य के वास्ते सिर्फ़ फल और नाज ही बनाया है। जिस जोश के साथ यह मंडली इस विषय की छान-बीन कर रही है उससे प्रतीत होता है कि ज़रूर असर गहरा नमूदार होगा और दया से अचरज नहीं कि कुछ ज़माने में सारी दुनिया में भारी प्रचार और बरताव मांसाहार के छोड़ने और फल और अनाज की ग़िज़ा इख़्तियार करने का हो जावे। यह मालिक की ग़ैरमामूली दया का निस्सन्देह इज़्हार है। जीवों का इस मांसाहार की कठिन और मुज़िर आदत से छुटकारा होने से सच्चे उद्धार की युक्ति की कमाई के बाहरी विघ्नों में से एक भारी विघ्न की जड़ कट जावेगी।

(२) इस सिलसिले में चन्द प्रसिद्ध और तजरुबेकार लोगों ने यह भी राय ज़ाहिर करनी शुरू की है कि मांसाहार तो मुज़िर है ही पर इसके साथ साथ एक और भी नाक़िस आदत आम है यानी यह कि आम तौर पर लोग खाना मिक़दार में ज़रूरत से बहुत ज़्यादा खाते हैं इस अक़ीदे पर कि ज़्यादा

मिक़दार ज़्यादा ताक़त के लिये ज़रूरी है। यह भी ख़्याल ग़लत है। तजरुबे से साबित हुआ है कि ज़रूरत से बहुत ज़्यादा खाना आम तौर पर खाया जाता है जो बजाय फ़ायदा करने के नुक़सान करता है। मुनासिब तजवीज़ के साथ खाना आधा व तिहाई करने से तन्दुरुस्ती और ताक़त की तरक़्क़ी होती हुई साबित हुई है। यह भी संतों के हुक्म की एक अनोखी तसदीक़ है और उन लोगों की अनजानता की बोल-चाल का एक दया भरा जवाब है जो संतमत पर तान लगाते हैं कि 'संतमत की शिक्षा के मुताबिक़ लोग खान पान कम करके कमज़ोर और बेकार हो जाते हैं।' हरचन्द कि अभ्यासियों की बहुत सी ऐसी मिसालें हुईं और मौजूद हैं जिन्होंने बावजूद निहायत थोड़े मगर मुनासिब आहार के दुनिया के ताक़तवर लोगों से ज़्यादा बरदाश्त और मेहनत के साथ दिमाग़ी और जिस्मानी दोनों काम को उम्दगी से अर्से तक अंजाम दिया और देते हैं। लेकिन इस पर यह कहा जा सकता था कि यह तजरुबा तो अभ्यासी का है, मामूली आदमी के लिये कम ग़िज़ा मुज़िर होगी। पर दुनिया की बड़ी जिस्मानी क़ुव्वत और जोश वाली क़ौमों में, जो निहायत ज़ोर-शोर से दुनियवी कारोबार में उलझी हुई हैं और जिनके दिलों में जिस्मानी क़ुव्वत

की भारी महिमा समाई हुई है, ऐसा ख़याल पैदा होना और उनके तजरुबे से साबित होना कि मौजूदा आदत से बहुत कम मिक़दार की ग़िज़ा से ज़्यादा ताक़त और फ़ायदा हासिल हो सकता है, तसदीक़ इस बात की है कि संतों की हिदायत चौथाई बल्कि तिहाई खाना कम कर देने की न सिर्फ़ परमार्थ में मुफ़ीद है बल्कि हर हालत में यथार्थ और ज़्यादा से ज़्यादा फ़ायदा देने वाली है।

(३) इन बातों के मुतअल्लिक़ 'समाचार' के आयन्दा परचों में इस विषय के मुस्तनद लोगों के तजरुबे व ख़यालात का ज़िक्र मय उन ख़यालात के नतीजे व असर के दर्ज किया जावेगा।

---

(३) परमार्थ में बाल-स्वभाव की जल्दी व घबराहट की अनजानता

जैसे पिता अपने बच्चों के लिये उम्दा बाग़ लगाना शुरू करे और उनको प्यार से बतावे कि इस जगह बड़े रसीले सुगन्धित फल फूल रंग बिरंग के पैदा होंगे और यह सुनकर बच्चे बहुत मगन हो कर आशा लगावें और उस काम को तवज्जुह से निहारने लगें बल्कि उस बहार को जल्द देखने के वास्ते आप भी उत्साह से उस काम में शरीक हो

जावें पर कुछ दिन तक सिर्फ़ खोद खाद बोने सींचने का रूखा सूखा काम देख कर बाल-स्वभाव से घबरा कर कहने लगें कि फल फूल तो अब तक कोई निकला ही नहीं, अब कब निकलेगा, और जो छोटी छोटी नाज़ुक डालियाँ और पत्ते निकलते नज़राई भी देवें, उनमें आस वाली बात न पाकर निराश होने लगें मगर पिता उनकी भोली भाली समझ और बचपने की अनजानता और घबराहट पर ज़्यादा ध्यान न देकर उनको अनेक रीति से फुसलाता और उनकी उमंग व आशा को बढ़ाता रहे और आख़िर को वही बच्चे एक दिन उसी मिट्टी, कीचड़ और साधारण डाल पत्तों में से अति मनोहर फूल फल खिलते व लगते हुए देखकर महा मगन हो जावें और अचरज में भर जावें, इसी तरह वह दयाल पिता अपने बाल-दशा वाले जीवों को चरणों में लगा कर प्यार से वादा करता है कि वह अपनी दया मेहर से परमार्थ की महा सुन्दर बाड़ी इस संसार में रचकर भक्तजनों को प्रेम और आनन्द का अचरजी बिलास बख़्शेगा और प्रेमीजन इस वादा को याद रखकर उमंग से आशा लगा कर यथाशक्ति भजन बन्दगी में लग जाते हैं लेकिन जब गढ़त और सफ़ाई व दुरुस्ती का काम, जिसमें रगड़ और कठिनाई ज़्यादा पेश आती है और प्रगट फल साफ़ नज़राई नहीं देता, मुद्दत तक

जारी रहते देखते हैं तो घबराने लगते हैं और एक दम वह भारी मतलब हासिल होता न देखकर जो तजरुबे दया के आते भी हैं उनको क़दर नहीं समझते व उनका सिल्सिला उस पूर्ण फल के साथ न परखकर बाल-स्वभाव से निराश होने लगते हैं। ऐसी बचपने की निराशता और घबराहट को सतसंग के दयाभरे बानी-बचन की मदद से दूर करना और उमंग और आशा को सदा बढ़ाते चलना लाज़िमी है। मामूली से मामूली दया मेहर के परचों को थोड़ा न जानना चाहिये। उनके अन्तर्गत परम पिता का समर्थ हाथ मौजूद है। अवश्य उन्हीं इशारों में से और उसी साधारण दशा में से एक दिन वह पूर्ण फल भी प्रगट होकर जन्म सुफल कर देगा।

---

(४) प्रार्थना का असर

११ मई सन् १६१२ ई० के पॉपुलर सायंस सिफ़्टिंग्स (Popular Science Siftings) में ज़िक्र है कि हाल के ज़माने में एक शख़्स जॉर्ज मूलर ने, जो शहर ब्रिस्टल मुल्क इङ्गलिस्तान का रहने वाला था, एक मुद्दत तक बड़े बड़े यतीमख़ाने जारी रक्खे और बेशुमार यतीमों और बेकसों की परवरिश और दस्तगीरी करता रहा। मगर इस नेक काम के वास्ते

उसने अपना कुल भरोसा मालिक के चरणों में प्रार्थना करने का रक्खा था और प्रण ठान लिया था कि किसी इन्सान से वह कभी कुछ न माँगेगा। चुनाँचे इस काम के निमित्त उसने अपनी ज़िन्दगी में करोड़ों रुपया बहम पहुँचाया मगर कभी किसी से कुछ न माँगा। जब उसको रुपये की ज़रूरत होती तो सिर्फ़ मालिक से प्रार्थना करता था और निहायत अचरजी तौर पर दुनिया के मुख़्तलिफ़ हिस्सों से नक़द और जिन्स उस प्रार्थना के जवाब में अंधाधुन्ध चली आती थी। जो लोग जॉर्ज मूलर के पास रुपया भेजते थे इस बात की तसदीक़ करते थे कि उनके दिल पर एक अचरजी असर बे शान-गुमान पैदा होता था— किसी किसी को सोने की हालत में और किसी किसी को अपने पूजा के वक़्त—और यह असर ऐसी बेचैनी पैदा करता था कि जब तक वे लोग उसके पास रुपया भेज न लें उनको चैन नहीं आता था। इससे आम तौर पर तसदीक़ इस बात की ज़रूर होती है कि इन्सान के दिल से जो ख़्यालात की धारें उठती हैं वे मिस्ल तारबर्क़ी की ख़बरों के दूसरे क़ुदरती तारघर यानी इन्सान के दिमाग़ में फैल कर असर कर सकती हैं। मगर जॉर्ज मूलर के एक ज़माने के मुसल्सल तजरुबे का भारी नतीजा यह निकलता है कि दर-असल रचना में कोई ऐसा चेतन आलमगीर क़ुदरती

तारघर भी मौजूद है जिसमें सच्ची प्रार्थना की लहरें पहुँच सकती हैं और जो उनको मंज़ूर करके मुनासिब जानिब में प्रेरणा करके प्रार्थना का मतलब पूरा करा सकता है।

जबकि एक अनजान जीव, जिसको कुछ भेदभाव मालूम न था और न उसको उस निशाने ही की ख़बर थी, जहाँ से ऐसी बाअसर धार उठाई जा सकती है, और न यही जानता था कि किस तरीक़े से और किस जानिब यह धार रुजू करने से कामयाबी हो सकती है, सिर्फ़ अपनी सच्ची आरज़ू और विश्वास के बल से अपनी प्रार्थना से ऐसा लाभ उठा सकता था तो फिर उस प्रार्थना के गहरे फल का क्या वर्णन हो जो भेदी भक्तजन अपनी सुरत के मुक़ाम से उठाकर चैतन्य धार के वसीले से अपने चेतन भंडार यानी परम पिता के चरणों में रुजू कर सकता है। जो सर्व अंग से एकत्र होकर उमंग व प्रतीति सहित प्रार्थना इस रीति से प्रेमी के अन्तर में उठे तो क्यों न उससे महा सुखदायक परमार्थी फल प्रगट होगा? सच्ची प्रार्थना के भारी असर व लाभ की यह उमदा तसदीक़ है।

बसन्त

माघ सुदी पंचमी, जो बसन्त-पंचमी के नाम से प्रसिद्ध है, हिन्दुओं में एक मुबारक दिन माना जाता है और सुख व खुशी के मौसम का अगुआ समझा जाता है। संतों ने भी मालिक के इस संसार में आने के समय की उपमा बसन्त ऋतु से दी है। परम पुरुष पूरन धनी स्वामीजी महाराज ने पहले ही आरती के शब्द में सारबचन में फ़रमाया है:—

"चलो री सखी मिल आरत गावें।
ऋतु बसन्त आये पुरुष पुराने॥"

जिस अपार दया-मेहर की प्राप्ति की आशा संतों के इस संसार में आने से उत्पन्न होती है बेशक वही भक्तजनों के वास्ते सच्ची परमार्थी बसन्त ऋतु है और इस मनोहर उपमा के सिलसिले में बसन्त भक्त-मंडली में भी एक सुहावना दिन है मगर जो भारी महिमा इस दिन को हुज़ूर राधास्वामी दयाल ने बख़्शी है उसके कारण सतसंगियों के वास्ते तो यह दिन महा आनन्द व बिलास का है। परम दाता स्वामीजी महाराज ने संदेश जगत्-उद्धार का पहले पहल इसी दिन प्रकट फ़रमाया और इसी दिन से आम सतसंग जारी हुआ। हमेशा यह परम शुभ दिन पूर्ण उमंग व प्रेम के साथ आरती, पूजा, अभ्यास में सर्फ़ करने योग्य है।

इस साल यह दिन ११ फ़रवरी सन् १६१३ ई० रोज़ मंगलवार को पड़ा था। उस दिन यहाँ पर सतसंग में सब प्रेमी जनों ने अति उमंग के साथ मालिक की भजन-बन्दगी करके अचरज रस और आनन्द लिया और इसी शुभ दिन को 'प्रेमसमाचार' की तरफ़ से आरम्भ की प्रार्थना, जो दरअसल सब ही प्रेमी जनों के हृदय की संयुक्त प्रार्थना है, मालिक के चरणों में अति दीनता से की गई। जो नवीन उमंग व आनन्द का बिलास परम दाता हुज़ूर राधास्वामी दयाल ने उस समय बख़्शा उसका शुकराना क्या अदा हो सकता है ?

होली

परम पिता स्वामीजी महाराज की बानी[1] में आया है:—

'फागुन मास रँगीला आया'।
'घर घर बाजे गाजे लाया॥'

और भी फ़रमाया है:—

'यह नरदेही फागुन मास।
सुरत सखी आई करन बिलास॥ ३॥'

उसी शब्द में आगे यों भी फ़रमाया है:—

'तुझ को फिर कर फागुन आया।
सम्हल खेलियो हम समझाया॥ १५॥

१—सारबचन, छन्दबन्द, बचन ३८ फागुन मास नवाँ।

गोया संतों ने फागुन मास को नर-देह से उपमा देकर उसकी ख़ास महिमा फ़रमाई है और निहायत मुनासिब, क्योंकि इस परम उत्तम देह में, जिसमें आदि से अंत तक के द्वारे मौजूद हैं और जिसमें अनन्त शब्द झनकार रहे हैं और नित्य आरती हो रही है और जिसमें बैठकर सुरत परम बिलास को प्राप्त हो सकती है, ऐसी महा अचरजी और सुखदायक वस्तु की उपमा साल के सबसे बढ़ कर आनन्द और बिलास भरे मास से ही दी जा सकती थी। इससे बेहतर उपमा का अनुमान भी नहीं हो सकता। मगर साथ ही साथ जैसा कि तीसरी कड़ी मज़कूराबाला में फ़रमाया है यह भी हिदायत की कि ऐसी उत्तम देह पाकर सम्हल के इस संसार में खेलना, तब निर्मल बिलास प्राप्त हो सकता है। मतलब यह कि जो देह धारण करके संसार के कीचड़ व ग़लीज़ में ऐसी उत्तम अवस्था को खो देते हैं वे अंत को महा दुःख को प्राप्त होते हैं जैसा कि उसी शब्द बारहमासा में फ़रमाया है:—

"धूल उड़ाई छानी ख़ाक।
पाप पुन्य सँग हुई नापाक ॥ ७ ॥
इच्छा गुन सँग मैली भई।
रंग तरंग बासना गही ॥ ८ ॥
फल पाया भुगती चौरासी।
काल देस जहाँ बहुत तरासी ॥ ९ ॥

आस तिरास माहिं अति फँसी ।
देख देख तिस माया हँसी ॥ १० ॥
हँस हँस माया जाल बिछाया ।
निकसन की कोइ राह न पाया ॥ ११ ॥
तब संतन चित दया समाई ।
सत्यलोक से पुनि चलि आई ॥ १२ ॥
ज्यों त्यों चौरासी से काढ़ा ।
नरदेही में फिर ला डाला ॥ १३ ॥
चरन प्रताप सरन में आई ।
तब सतगुरु अतिकर समझाई ॥ १४ ॥
तुझको फिर कर फागुन आया ।
सम्हल खेलियो हम समझाया ॥ १५ ॥"

लेकिन अगर ऐसे समय में मालिक की भजन-बन्दगी, सेवा सतसंग, गुरु-भक्ति वग़ैरह का रंग खिले और जीव इस तरह पर अपने अनमोल देह को सफल करे तो यहाँ भी आनन्द और अंत को चरणों का परम बिलास पाकर अमर सुख को प्राप्त हो जावे ।

यह तो वर्णन जीवों की अन्तरी काररवाई का हुआ । इस नवीन उपमा के अनुसार स्वाभाविक ऐसा ही होना चाहता था कि जहाँ संसारी जीव इस उत्तम समय होली को महा अपवित्र और नीरस कामों में आम तौर पर खोया करते हैं उस समय पर भक्तजन अपने परम हितकारी संत सतगुरु के हज़ूर में बैठ कर

नवीन रस, आनन्द और बिलास करें। चुनाँचे मौज से ऐसा ही सदा से राधास्वामी-पंथ में होता आता है यानी तातील होने के सबब प्रेमी जन जहाँ तहाँ से हमेशा से हज़ूरी दरबार में जमा होकर चरणों का रस और आनन्द लेते आये हैं। चुनाँचे इस साल भी होली तारीख़ २३ मार्च सन् १९१३ ई० को वाक़ै हुई। दूर दराज़ से क़रीब पाँच छः सौ के प्रेमी जन बड़े उमंग और उत्साह से दरबार में हाज़िर होकर मालिक की भजन-बन्दगी और सतसंग में मसरूफ़ रहे। जो छबि सतसंग में उस वक्त मालिक ने दया करके प्रकट फ़रमाई और जो आनन्द और सरूर पाठ में निहायत ग़ैरमामूली बख़्शा उसकी कैफ़ियत हाज़िरीन दरबार ही जानते हैं, वर्णन नहीं हो सकती। हज़ारहा हज़ार शुक्र उस मालिक का है कि ऐसे समय पर, जबकि संसारियों की तवज्जुह मुज़िर जानिब होती है, हम भक्त-जनों को अपने चरणों में खींच कर अपार दया मेहर फ़रमाकर अपूर्व आनन्द और रस से सरशार और मालामाल फ़रमा दिया। इस मौक़े पर दो शादियाँ भी सतसंगियों में बड़े उमंग के साथ सतसंग-मंडप में बमौजूदगी जुम्ला सतसंगी भाइयों के हुईं।

भंडारा सालाना परम पुरुष पूरन धनी स्वामीजी महाराज

बवजह क़याम मंसूरी के इस साल भंडारा हुज़ूर स्वमीजी महाराज हस्ब मामूल तारीख़ यकुम असाढ़ मुताबिक़ १६ जून सन् १६१३ ई० को मुक़ाम मंसूरी में हुआ। बावजूद पहाड़ की रसाई और क़याम की दिक़्क़त व न होने किसी तातील के क़रीब तीन सौ के सतसंगी शरीक हुए। दया से बावजूद यहाँ पर रोज़ पानी बरसने के भंडारा के एक रोज़ क़बल व बाद तक मौसम निहायत उम्दा रहा और हुज़ूरी सिंहासन शामियाना के नीचे बड़े उमंग से आरास्ता किया गया था। उस जगह आरती पूजा बड़े आनन्द और बिलास के साथ करके सब भक्त जनों ने अपना भाग जगाया। ख़ास कर पंगत लग जाने के बाद यकायक जो प्रेमी जनों ने बेसाख़्ता उमंग से पाठ शुरू कर दिया उसमें क़रीब एक घंटा के मगन होकर सब प्रसाद पाना भूल गये। बादहू सब ने प्रसाद पाया और हस्ब मामूल ग़रीब मुहताजों को ख़ूब तक़सीम हुआ।

R. S.

QUESTIONS & ANSWERS

No. 1

From Mr. T. A. Sambasiva Sastry of Tinnevelly.

1st February 1913

Q. What is meant by "Sants are Nitya Avatar"?

A. Fully detailed reply is not possible in the short compass of a letter. Brief reply is as follows:—

The Supreme Creator maintains His Touch with the entire creation according to His Supreme Laws. This Touch is not accessible anywhere else in this creation except in the innermost quarters of a spirit-entity which is of the essence of the Supreme Being. If this Touch were denied to this creation, no spirit-entity could exist here; and, deprived of these spirit-entities, the creation would forthwith collapse. It is through this Link that the innermost prayers of a spirit-entity can ascend to His August Presence; in response whereof He graciously assumes the Supremely Merciful Human Form, known as Param Sant Satguru. This Link remains ever present in this creation and has been aptly called "Nitya Avatar".

Q. What is *nirmal* pleasure, *malin* pleasure? Is there no gradation in the latter pleasure?

A. Concentration of spirit-current on a *mayak* plane—be it subtle or gross—constitutes *malin anand* Concentration on a purely spiritual plane is *nirmal anand*. There are necessarily gradations in the former, commensurate with the gradations of the *mayak* regions.

Q. Is our existence on this plane *salokya* so far as this plane is concerned?

A. There is, perhaps, some misconception about the import of the word *salokya*. *Salokya* is not used in reference

to any plane. *Salokya*, *sameepya*, *sarupya* and *sayujya* are techincal terms used by adepts to indicate their status in reference to the Deity of a particular region. Getting access into the sphere of a Deity makes the adept *salokya* with that Deity. Such access must necessarily be accompanied with *laksh gyan* (actual realization) of the Deity. Therefore, one can be said to be *salokya* with the Deity of a particular region when access with that region is gained and actual realization of the Deity is attained.

Q. If the spirit rises above its seat during sleep, why no pain of death is felt ?

A. The spirit *never* rises above its seat (*third til*) during normal sleep. During sleep, its *currents* only are withdrawn from the *gyan indrees* of the physical body towards the region of sleep (*swapna desh*) which is the *kanth chakra* (throat). Death supervenes only when the spirit fully passes out of the *sixth chakra*, and must always be attended with extorionate pains unless this passage has been traversed by true *abhyas* in life.

Q. A devotee is contemplating the *swarup* of Soamiji Maharaj now; can he advance ? If so, how far ? Can His *swarup* be manifested in him ?

A. Reply to this question is to be found in Bachan No. 250, *Sar Bachan Prose*. Contemplation of the Form of the *Vakt Guru* is indispensable for further progress. Persisting in the contemplation of the departed Form would suspend progress. Soamiji Maharaj graciously laid all the stress that was possible in human language on this most vital point of our religion, in Bachan No. 250. That must be carefully perused and understood. There should, however, be no childish hurry in this matter, when such a contingency arises. It is the most serious turning point in the spiritual career of a devotee. A mistake in this matter would prove ruinous. The former Form should be contemplated until by internal and external indications the new Form asserts itself within the devotee. But to

merit these gracious indications, a devotee must bestir himself. Frequent company of *true Premis* and an unremitting search after the object of the heart are indispensable. Such a loving, longing heart cannot long remain empty. Sooner or later, the Beloved *Param Pita* is sure to attract such a devotee to His Beloved *charans*.

Q. Is the contemplating of *Vakt Guru* necessary, when the manifestation of the *swarup* of the previous Sant Satguru is complete in him ?

A. If it is correctly understood what the complete manifestation of the *swarup* means, of course, the question of changing contemplation would not arise. Complete manifestation is nothing less than the *Laksh Gyan* of the *Nij Rup*. If this most exalted status in devotion has been attained the question becomes unnecessary.

Q. Will the manifestation of the *swarup* of a Sant Satguru discontinue in a devotee, as soon as He departs from this world ?

A. With the departure of one Form, its *Akar* disappears from the entire *mayak* regions. It cannot respond to either prayer or contemplation. If, however, the Gracious Current that had assumed that Form does not recede to its Source and mercifully takes abode in another suitable Form (here), it may, occasionally, for the good of some Statsangis, who, either do not or would not know, but whom It lovingly means to protect, assume the former Form on extremely critical occasions.

Q. What is *Nij Dhar* ? What is the *Dhar* that lives in mortals ? Can *Nij Dhar* be existing in more than one individual at the same time ?

A. *Nij Dhar* is that Supreme Tide which issues forth from the Supreme Spiritual Ocean and expands into the lower creation for the gracious object of redeeming spirit-entities. It cannot exist in more than one body at a time. The *Dhar* that lives in ordinary mortals is the *Surat Dhar*.

Q. Is there *Akash* for each sphere higher up ?

A. *Akash* (not the technical *Akash Tattva*) is the region of the subtle constituents of a particular sphere, and always surrounds that sphere. Every sphere that has been constructed out of constituents supplied from region subtler than itself must necessarily have a suitable *Akash* surrounding it.

Q. What is *Surat Nirat* ?

A. *Surat* is the spirit-entity. Its active function is *nirat* (literally that which is not *rat* or absorbed).

Q. Can the spirit actually see all the lower six centres when it reaches the seventh ?

A. It will have the power and can see all the six lower centres if it so wills.

Q. What is the form of the spirit above the *third til* ?

A. Form of spirit cannot be seen without cover anywhere in the *mayak* regions, whether above or below *third til*. All forms visible in this creation are those of lower or higher *man;* and spirit ever remains concealed within *man*. It is only in the purely spiritual regions that the form of the spirit is manifested in full glory.

NO 2

From B. Debendranath Kumar, Shahaganj

Q. The effects of one's *karma* will be mitigated through Sant Satguru's mercy according to one's circumstances ; but as far as I know *one's everything is possible in Sant Satguru* if one can rest assured in Him. Is it so or not ?

A. Yes, true abiding faith in the merciful *charans* of the true Sant Satguru is all in all for the devotee. It will mitigate *karmic* effect and liberate spirit eventually.

शब्द (१)

होली

खेलत फाग अपार पियारे (आज) ॥ टेक ॥

अकह अपार अनन्त धाम से, आये पुरुष अपारे ।
अगम अलख सत भँवर नगर होय, कीनी जग उजियारे ।
पिता मेरे प्रान अधारे ॥ १ ॥

जनम जनम की तपन बुझाकर, सीतल अंग लगा रे ।
चरन सरन दे सुरत सँवारी, दीनी दात अपारे ।
गुरू मेरे परम दुलारे ॥ २ ॥

अकथ बियोग हटाया छिन में, खोल दिये पट सारे ।
चटक चली सुर्त खेलन होली, सहस गगन दस द्वारे ।
महासुन पार सिधारे ॥ ३ ॥

परम जोग पद पाय मगन होय, सत्त अलख दरसा रे ।
अगम अगाध अनाम धाम चढ़, मिल गया प्रेम भंडारे ।
गुरू गति कस कहूँ गा रे ॥ ४ ॥

प्रेम बिलास मिला अब भारी, घट घट रंग भरा रे ।
अचरज शोभा अद्‌भुत लीला, शब्दन की झनकारे ।
रची अस फाग नियारे ॥ ५ ॥

जग बिच धूम मची अति भारी, लीनी सबको तारे ।
चहुँ दिसि प्रीतम लीला दरसे, हुई रचना सरशारे ।
मेहर का वार न पारे ॥ ६ ॥

चरन सरन मिल जीव सुखारी, काल करम सब हारे ।
सतसँग भक्ती प्रेम लगन में, तन मन धन दइ वारे ।
मिले मेरे राधास्वामी पियारे ।। ७ ।।

शब्द (२)*

ऐसी चतुरता बलिहार ।। टेक ।।
करत सेवा वारि तन मन तजत भोग बिकार ।
नित्य प्रीतम प्रेम राता दीन गुरु आधार ।। १ ।।
तात मात असत्य जानत जानता जग जार[1] ।
देह गेह असार मानत होत सब से न्यार ।। २ ।।
गुरु प्रसाद सप्रेम पावत जारि लोकाचार ।
चरन गुरु का धाय चूमत पियत अमृत धार ।। ३ ।।
संत जन से नेह राखत नात जगत बिसार ।
साधु ऐसे प्रेमी जन से धाय कीजे प्यार ।। ४ ।।

शब्द (३)*

जिनको प्रिय न परम गुरु प्यारे ।। टेक ।।
तजिये तिनहिं कोटि बैरी सम यद्यपि प्रान अधारे ।
तिनके संग हानि जानि निज होइये तुरत नियारे ।। १ ।।
पिता मातु बंधू सुत बनिता भक्ति बिघ्न जिन डारे ।
तिनहि आदि से सबहिन तजिया जो जो गुरु आधारे ।। २ ।।

---

*शब्द नम्बर २ और ३ तुलसीदासजी के इसी मतलब के दो शब्दों के ढंग पर हैं । १—जाल ।

शब्द (४)

मंगल

परम गुरु परम पितु परम प्रिय नाथ मम ।
आदि पुरुष आदि हितु आनि जग तारिये ॥ १ ॥
जुगन जुग भूलि तुम चरन प्रभु बाल सब ।
हुये बेहाल जंजाल जग जारिये ॥ २ ॥
रहा जब अंध घोर सूझा नहिं कहीं ठौर ।
अब तो मिले नाथ मोर देर क्यों धारिये ॥ ३ ॥
सार सिन्ध सत्य सूर अद्भुत अपार नूर ।
कीनी जब जग ज़हूर दासन उबारिये ॥ ४ ॥
चरनन में सुरत जोड़ तन मन धन तोड़ फोड़ ।
देकर मोहि प्रेम डोर काज ही सँवारिये ॥ ५ ॥
सतसंग का परम चैन पाऊँ अब दिवस रैन ।
हरखूँ सुन प्रेम बैन दया से निहारिये ॥ ६ ॥
पिंड जाल छोड़ इधर दौड़ें मन सुर्त अधर ।
सहस गगन सुन्न सिखर सरवर चढ़ाइये ॥ ७ ॥
अटकूँ नहिं सिंध अंध काटो वह परम फंद ।
भँवर देइ प्रेम पेंग सतपुर पहुँचाइये ॥ ८ ॥
अलख अगम अकह हुलास निरखूँ अद्भुत बिलास ।
पाऊँ निज पद निवास महिमा क्या गाइये ॥ ९ ॥
माता पितु प्रान प्रिय प्रीतम सतगुरु दयाल ।
राधास्वामी सद कृपाल आस सब पुराइये ॥ १० ॥

शब्द (५)

दर्शन कैसे पाऊँ घट[१] में।
यह तो बात कठिन अति भारी ॥ टेक ॥
सतसँग करूँ नेम से निस दिन।
गाऊँ महिमा चरनन छिन छिन।
सुमिरन ध्यान भजन भी पुन पुन[२]।
कर कर सभी जतन मैं हारी ॥ १ ॥
मन से जूझूँ अपने बल भर।
दाता दया मेहर निज हिय धर।
जग से भागूँ नित ही डर कर।
पर कुछ चले न पेश हमारी ॥ २ ॥
दीन दुखी होय नित्त पुकारूँ।
तन मन धन सब चरनन वारूँ।
भक्तन सेवा सद[३] ही धारूँ।
तौ भी पुजे[४] न आस हमारी ॥ ३ ॥
अब क्या करूँ तुम्हीं बतलाओ।
करूँ जतन क्या वह सिखलाओ।
मिलो कौन बिधि सो जतलावो।
मेटो तपन हमारी सारी ॥ ४ ॥
जब जब दया से सतसँग दीना।
दुख सब पल छिन में हर लीना।

१—अन्तर। २—बार बार। ३—सदा। ४—पूरी होवे।

जान पड़ी अस किरपा कीना ।
बन गई अब सब बात हमारी ।। ५ ।।
मूँदत नैन अँधेरा वोही ।
मानो तिमिरखंड है घट ही ।
नेकहु झलक रूप का नाहीं ।
सूझत नहिं वह मूरत प्यारी ।। ६ ।।
सुनिये कंत[1] सुजान हमारे ।
या बिधि मम जीवन बिरथा रे ।
घट में जब लग दरश न पा[2] रे ।
नइया लगे न घाट हमारी ।। ७ ।।
जग से डरूँ सदा मैं प्यारे ।
राखो चरनन ओट सदा रे ।
बिनती करूँ पुकार पुकारे ।
घट में दर्शन दीजै आ री ।। ८ ।।
अन्तर दया बिचारो ऐसी ।
मिटे तपन घट जैसी तैसी ।
टिके सुरत निज चरनन वैसी ।
जैसे सुत माता लिपटा री ।। ९ ।।
राधास्वामी चरनन बासा ।
अकह अगम सत अलख निवासा ।
पाई मैं होय दासन दासा ।
बन गई सचमुच बात हमारी ।।१०।।

१—कान्त, प्रियतम । २—पाऊँ ।

शब्द (६)

दर्शन दीजै दीनदयाला ।
दाता दासन के हितकारी ॥ टेक ॥
जब ते चरन सरन तुम[१] लीनी ।
मन बुधि सुरत हुए लवलीनी ।
तुम्हरी किरपा घट में चीन्ही ।
होगई जीवनि[२] सुफल हमारी ॥ १ ॥
मैं हूँ बाल अनाड़ी प्यारे ।
तुम हो दाता अपर अपारे ।
राखो चरनन मोहि सदा रे ।
मेरी निस दिन यही पुकारी ॥ २ ॥
यह जग विष की खान अपारा ।
बहती प्रबल अनल[३] की धारा ।
तुम मोहि लीनी अधम उबारा ।
गाऊँ कैसे महिमा भारी ॥ ३ ॥
बिछड़ूँ नहीं चरन से कबही ।
जनम जनम मेरी बिनती एही ।
तन बिच दर्शन पाऊँ नित ही ।
सुनलो अर्ज़ ग़रीब भिखारी[४] ॥ ४ ॥
राधास्वामी प्रान पियारे ।
हम सब दासन के आधारे ।

१—तुम्हारी । २—ज़िन्दगी । ३—आग । ४—भिखारी की ।

सब जग (हमको) सहजहि लीनी तारे ।
अचरज अचरज अचरज भारी ॥
(लीला अचरज अगम अपारी) ॥५॥

शब्द (७)

धन धन धन प्रीतम बलिहारी ।
(आज) प्रेम लहर लहरावत न्यारी ॥टेक॥
बरसत अम्मृतधार अखंडा[1] ।
भींज रही रचना सब सारी ॥ १ ॥
धूम मची अब धरन[2] गगन में ।
होवत पल छिन जग उद्धारी ॥ २ ॥
भक्ती राज[3] हुआ अब घट घट ।
माया काल निपट थक हारी ॥ ३ ॥
सुरत नवेली[4] सज धज आई ।
प्रीतम चरनन गई लिपटा री ॥ ४ ॥
पुरुष अपार अनन्त हमारे ।
मेहर दया से लिया अपना री ॥
(मेहर से सबको (हमको) लिया अपना री ॥ ५ ॥
चहुँ दिशि प्रेम घटा रही छाई ।
मस्त मगन सब जीव सुखारी ॥ ६ ॥

१—अटूट । २—पृथ्वी । ३—राज्य, अमल । ४—नई ।

मन इन्द्री भी मिर्मल होकर।
चरनन रस ले जगत बिसारी ॥ ७ ॥
तन मन अँग अँग उमँगत धूमत।
उठत अकह शब्दन झनकारी ॥ ८ ॥
सुरत चली तज पिंड असारा।
पँचरंगी फुलवार लखा री ॥ ९ ॥
सहस गगन दस द्वारा[1] खोलत।
महासुन्न के पार सिधारी ॥ १० ॥
भँवरगुफा होय सतपुर गाजी[2]।
सतगुरु दर्शन अद्भुत पा[3] री ॥ ११ ॥
अलख अगम और अनाम धाम चढ़।
मिल गये दर्शन राधास्वामी भारी ।११।

१—सहसदलकमल, त्रिकुटी, सुन्न। २—खुश होकर गरजी। ३—पाकर।

पुस्तकों का सूचीपत्र

ये पुस्तकें मैनेजर पब्लीकेशन्स, दयालबाग़ (आगरा) से मिल सकती हैं।

	नाम		मूल्य
	परम गुरु स्वामीजी महाराज रचित		
१	सारबचन (पद्य)	हिन्दी	(प्रेस में)
२	सारबचन (गद्य)	,,	,,
	परम गुरु हुज़ूर महाराज रचित		
३	राधास्वामी मत प्रकाश	अंगरेज़ी	१.५०
४	पिलग्रिम्स पाथ (हुज़ूर महाराज के पत्र)	,,	१.५०
५	राधास्वामी मत संदेश	हिन्दी	(प्रेस में)
६	राधास्वामी मत उपदेश	,,	१.००
७	निज उपदेश	,,	१.००
८	प्रेम उपदेश	,,	१.००
९	सार उपदेश	,,	१.२५
१०	प्रश्नोत्तर	,,	(प्रेस में)
११	जुगत प्रकाश	,,	२.००
१२	प्रेमबानी भाग १	,,	५.००
१३	,, भाग २	,,	४.००
१४	प्रेमबानी भाग ३	हिन्दी	४.००
१५	,, भाग ४	,,	२.५०
१६	प्रेमपत्र भाग १	,,	४.००
१७	,, भाग २	,,	४.००
	परम गुरु सरकार साहब रचित		
१८	प्रेम-समाचार	,,	१.२५
	राधास्वामी सतसंग सभा के स्वत्वाधिकार में अनुवादित पुस्तकें		
१९	अमृतबचन (परम गुरु महाराज साहब रचित पुस्तक 'डिस्कोर्सेज़ आन राधास्वामी फ़ेथ' का अनुवाद)	बंगला	३.००
	परम गुरु स्वामीजी महाराज रचित		
२०	सारबचन	अंगरेज़ी	३.२५

	नाम			मूल्य
	परम गुरु हुज़ूर महाराज रचित			
२१	प्रेम पत्र भाग १		अंगरेज़ी	६.००
	हुज़ूर साहबजी महाराज रचित			
२२	यथार्थ प्रकाश भाग १	(विशेष संस्करण)	अंगरेज़ी	६.००
२३		(साधारण संस्करण)	,,	३.५०
२४	,, भाग २		,,	५.५०
२५	,, भाग ३	(प्रथम पुस्तक)	,,	५.५०
२६	,,	(द्वितीय पुस्तक)	,,	४.००
२७	जिज्ञासा		,,	१.००
२८	राधास्वामी मत दर्शन		,,	१.००
२९	प्रेम संदेश		,,	१.००
३०	डिस्कोर्सेज भाग १ (सतसंग के उपदेश)		,,	४.००
३१	,, भाग २		,,	४.००
३२	,, भाग ३		,,	३.५०
३३	जतन प्रकाश		,,	१.००
३४	सिलैक्शन्स फ़्राम प्रेम सन्देश		,,	१.००
	राधास्वामी सतसंग सभा के स्वत्वाधिकार में सम्पादित या लिखित पुस्तकें			
३५	फ़ोर लैटर्स (हुज़ूर सरकार साहब)		,,	(प्रेस में)
३६	सिलवरी स्पीचेज़		,,	०.२५
३७	शब्द संग्रह भाग १		हिन्दी	२.५०
३८	,, ,, भाग २		,,	३.५०
३९	संत बानी संग्रह भाग १		,,	१.००
४०	संत बानी संग्रह भाग २		हिन्दी	१.२५
४१	रत्नावली		,,	१.००
४२	दयालबाग़ पैम्फ़लेट (छोटा)		अंगरेज़ी	०.४०